ॐ

भारत में कुंभ-मेला

लेखक

स्वामी वेदानन्द

अनुवादक

विश्वनाथ मुखर्जी

जनवरी, १९८९

निवेदन

धर्म-प्राण नर-नारियों में शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति होगा जिसने कुंभ-मेला का नाम न सुना हो। संपूर्ण संसार में कुंभ-मेला एक आश्चर्यजनक उत्सव है। कुंभ मेला भारत का अक्षय गौरव है। जिन लोगों ने प्रत्यक्ष रूप में इसे नहीं देखा है, वे इसकी महिमा और गुरुत्व की सम्यक उपलब्धि नहीं कर सकते। भारतीय समाज, धर्म और राष्ट्रीयता कुंभ मेला से सम्पूर्ण रूप में समन्वित है। कुंभ मेला के बारे में जानने और सुनने के लिए प्रत्येक भारतवासी में अदम्य उत्साह और आकांक्षा जाग्रत रहती है। हरिद्वार, प्रयाग, नासिक, उज्जयिनी—इन चारों तीर्थों के प्रत्येक स्थान पर प्रति बारह वर्ष बाद मेला लगता है। भारत सेवाश्रम संघ इन कुंभ-मेलाओं में समागत अगणित नर-नारियों की सेवा प्राणपण से प्रयत्न करता है। अपनी विशाल स्वेच्छा सेवकों के द्वारा हजारों साधुओं तथा लाखों गृहस्थों के स्नान का प्रबन्ध से लेकर दातव्य औषधालय, अन्नसत्र, यात्री निवास, लापता लोगों के बारे में खोज, पत्राचार, आर्तों की सेवा, विपन्नों की रक्षा आदि कार्यों की व्यापक व्यवस्था करता है। इन कार्यों के साथ ही धर्म एवं संस्कृति का नियमित प्रचार करता रहता है। साधु-सम्मेलन और हिन्दू-संस्कृति सम्मेलन का आयोजन चलता रहता है। इस अवसर पर कुंभ स्नानार्थी धर्म पिपासु नर-नारी कुंभयोग और कुंभमेला के बारे में विभिन्न जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं। इसी के लिए इस पुस्तिका का प्रकाशन किया गया है।

उल्लेखनीय है कि सन् १९२७ तथा सन् १९३० ई० में प्रकाशित 'कुंभमेला' तथा 'प्रयाग धाम में कुंभमेला' नामक दो पुस्तिकाएं प्रकाशित हुयी थीं, 'भारत में कुंभ मेला' उन दोनों पुस्तिकाओं का समन्वित रूप है। इसके साथ ही इस पुस्तिका में अनेक समयोपयोगी जानकारियां, नये विवरण, प्रासंगिक तथ्य भी शामिल किये गये हैं। इति—

—प्रकाशक

BHARAT SEVASRAM SANGHA
FOUNDER - SHRIMAT SWAMI PRANAVANANDAJI MAHARAJ
पूर्ण कुम्भ मेला

ॐ

प्रस्तावना

भारत-धर्मप्राण

धर्म के नाम पर भारतवासी जितने मतवाले हो उठते हैं, उतना अन्य किसी में नहीं। समाज-नीति में नहीं, राष्ट्रीय नीति पर नहीं और न अर्थ नीति पर ही। भारतीय जाति, राजा-प्रजा, धनी-दरिद्र, भद्र-अभद्र, पंडित-मूर्ख, गृहस्थ-वनवासी, आदि सभी अपने धर्म के नाम पर अपना भेदभाव और द्वन्द्व भूल जाते हैं, समस्त विद्वेषों को क्षमा कर, एक क्षेत्र में, एक ही लक्ष्य को लेकर, एक ही उद्देश्य से सम्मिलित होते हैं।

मिलन के स्थान, काल और उद्देश्य

इसी कारण अनादिकाल से हम देखते आ रहे हैं कि इन भारतवासियों का मिलन-स्थल न तो किसी दिग्विजयी राजा की राजधानी है और न कोई वाणिज्य-ऐश्वर्यशाली नगरी। वे हैं पवित्र तीर्थस्थान समूह—गया, काशी, पुरी, प्रयाग, कुरुक्षेत्र, नैमिषारण्य, अयोध्या, वृन्दावन, मथुरा, द्वारिका, हरिद्वार, नासिक, उज्जयिनी आदि। इस मिलन या सम्मेलन का समय न तो किसी राजनीतिक और न किसी सामाजिक कारण से निर्धारित हुआ है, बल्कि शास्त्र द्वारा निर्दिष्ट राशि-नक्षत्र-ग्रहादि के संयोग के आधार पर हुआ है। इस सम्मेलन का उद्देश्य किसी ऐहिक समस्याओं की मीमांसा की पूर्ति के लिए भी नहीं है। इसका उद्देश्य है व्यष्टि और समष्टि जीवन को धर्मादर्श के उच्च सिंहासन पर सुदृढ़ रूप में प्रतिष्ठित करना। धर्म की मृत संजीवनी से अनुप्रेरित कर, समाज और राष्ट्रीय जीवन के प्रत्येक स्तर को संचारित करते हुए उसे शाश्वत कल्याण में विमंडित करना।

भारतवासियों का चरम लक्ष्य

यही वजह है कि प्रतिदिन सहस्त्र-सहस्त्र नर-नारी, आवाल-वृद्ध-वनिता; तीर्थ-दर्शन, साधु-दर्शन, पुण्यार्जन तथा धर्मलाभ के लिए अशेष क्लेश हंसते हुए सह्य करते हैं, सांसारिक हानियाँ, आत्मीय स्वजनों के विरोध तथा आपत्तियों एवं

आर्तनाद की उपेक्षा करते हुए व्याकुल भाव से तीर्थयात्रा करने चले जाते हैं। भारतीय नर-नारी धर्म के लिए सर्वस्व अर्पण कर सकते हैं, करते हैं; धर्म के लिए वे गृह, परिजन, आत्मीय-स्वजन, सुख-संभोग आदि के आकर्षणों का बगैर आसक्ति के उपेक्षा कर देते हैं। भारत का मूलमंत्र ही त्याग है। भारतवासी इसे जानते हैं, विश्वास करते हैं और अपने सामाजिक तथा व्यक्तिगत दैनिक जीवन के आचारानुष्ठान, छोटे-मोटे कार्यों में परिणत करते हैं– "त्यागेनैके अमृतत्वमानशुः"–'एकमात्र त्याग के द्वारा ही अमृत्व की प्राप्ति होती है।' भारत का निर्माण किन उपादानों से हुआ है–इसे अनुभव करें।

भारत के राष्ट्रीय सम्मेलन की विशेषता

भारतीय कितने धार्मिक हैं, इसका सर्वोत्तम प्रमाण है–यह विराट कुंभ मेला। भारतीयों के अलावा संसार की अन्य कोई जाति क्या इतने विशाल अनुष्ठान की कल्पना कर सकता है? विश्व के इतिहास में, किसी देश में किसी भी समय क्या ऐसा संभव हुआ है या होता है? जहां न उद्योक्ता हैं और न आह्वानकर्ता, संवाददाता नहीं, सभा नहीं, समिति नहीं, संचालक नहीं जबकि इस समारोह में २५-३० लाख लोग जिनमें आबाल-वृद्ध-वनिता, महाराज से लेकर राह के भिखारी तक आते हैं, वह भी एक-दो नहीं, महीनों कल्पवास करते हैं। इतना भेद, इतना वैचित्र्य, इतनी विषमता, कहीं देखने में नहीं आता। फिर भी कितनी शान्ति, कितनी प्रीति, कितना आनन्द, कितना उत्साह, कैसी निष्ठा, कितनी सेवा, कितनी आत्मीयता, कितनी भक्ति, कितनी श्रद्धा और कैसी धर्म परायणता रहती है। न हिंसा, न द्वेष और न घृणा। कष्ट को कष्ट नहीं समझते, दुःख को दुःख नहीं मानते। मृत्यु को भी परमानन्द के साथ मुक्ति-लाभ समझते हुए सादर ग्रहण करते हैं!! यह मिलन, यह समन्वय, यह शान्ति, यह सौहार्द–केवल भारत में ही संभव है। वह भी स्मरणातीत काल से। क्या कोई बता सकता है कि किस आशा से, किस शक्ति से, किसे अवलंबन मानकर इतना विराट् महामानव यज्ञ संभव हुआ? वह यही धर्म है।

जाति का प्राणशक्ति कहां है?

इस नवयुग के संधिकाल में आज जो लोग देश की उन्नति के लिए राष्ट्र के पुनरुत्थान करने के उद्देश्य से सामाजिक, राजनैतिक और अर्थनैतिक क्षेत्र में पाश्चात्य भाव और आदर्शों के आधार पर विविध आन्दोलन करना चाह रहे हैं, परन्तु देशवासियों की एकजुटता के अभाव के कारण विफल होकर सोच रहे हैं कि इस देश का, इस जाति

का, अब कोई आशा नहीं है, a duing race—हमारा अनुरोध है कि वे एक बार आकर हमारे इस कुंभमेला को अपनी आंखों से देखकर यह निश्चय करें कि क्या यह जाति मृत है या जीवित। यह जाति वार्द्धक्य में अवनत अथवा यौवन के दुर्दम जीवनी शक्ति से ओतप्रोत है। यह भी देखें कि भारत का प्राणप्रस्रवण कहां है? जिस सूक्ष्म तंत्री में भारतवासियों का अखण्ड प्राण गूंथा हुआ है, उस तार को कोई स्पर्श नहीं कर सका है, ऐसी स्थिति में जाति के प्राणों में सुर का स्पन्दन कैसे जगा सकते हैं? एक बार धर्म के उच्चतर आदर्शों का अनुष्ठान और प्रचार करने प्रवृत्त हों, धर्म की जड़ में सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन का निर्माण करने का प्रयत्न करें तो ज्ञात होगा कि समग्र भारत तुम्हारी छत्रछाया में आ जायेंगे और आपके इशारे पर उठेंगे-बैठेंगे। तुम्हारे हृदय का प्रत्येक स्पन्दन राष्ट्र की धमनियों में मूर्त रूप धारण कर रहा है। धर्म की नींव में ही समाज-राष्ट्र और जाति धीरे-धीरे एकता में आवद्ध होकर सुश्रृंखलित, तेजस्वी और वीर्यवान हो उठेंगे।

कुंभमेला एक अद्भुत समारोह है। भारत के कोने-कोने में इस धार्मिक मेले का आह्वान पहुँच जाता है और वहां से असंख्य नर-नारी आकुल भाव से इस धर्मामृत का आस्वादन करने चले आते हैं।

नवशक्ति के प्रवल जागरण से राष्ट्र शक्ति की प्रत्येक पेशी आकुंचित, प्रत्येक धमनी में चंचल शोणित धारा उद्दाम गति से प्रवाहित होने लगती है। भारत अति उज्ज्वल भविष्य आसन्न है—इस पर विश्वास करें, अनुभव करें और प्रत्यक्ष करें। ॐ शान्तिरति।

अमृत कुंभयोग

पौराणिक कहानी

पुराणों के अनुसार हिमालय के उत्तर क्षीरसागर है जहां देवासुरों ने मिलकर समुद्र-मंथन किया था। मन्थन-दण्ड था—मन्दर पर्वत, रज्जु था—वासुकि तथा स्वयं विष्णु ने कूर्म रूप में मन्दर को पीठ पर धारण किया था। समुद्र-मन्थन के समय क्रमशः पुष्पक रथ, ऐरावत हाथी, पारिजात पुष्प, कौस्तुभ, सुरभी, अन्त में अमृतकुंभ को लेकर स्वयं धन्वन्तरी प्रकट हुए थे। उक्त कुंभ को उन्होंने इन्द्र को दिया था। इन्द्र ने उसे अपने पुत्र जयन्त को सौंपा। देवताओं की सलाह पर जयन्त उस कुंभ को लेकर स्वर्ग की ओर दौड़ा। यह देखकर दैत्याचार्य ने क्रोधित होकर दैत्यों को आदेश दिया कि बलपूर्वक उस कुंभ को उससे छीन लो। देवासुर संग्राम होने लगा। बारह दिन युद्ध करने के बाद

देवताओं का दल हार गया। इसी बीच पृथ्वी के कई स्थानों पर कुंभ को छिपाया गया था। जिन चार स्थानों पर कुंभ रखा गया था, उन्हीं स्थानों पर तब से 'कुंभयोग-पर्व' मनाया जा रहा है। देवताओं के बारह दिवस नरलोक में बारह वर्ष होते हैं। यही वजह है कि प्रति बारह वर्ष के पश्चात् कुंभ में स्नान करने के लिए यह महोत्सव होता है।

देवानां द्वादशाहोभिर्मर्त्यैं द्वार्दशवत्सरैः ।
जायन्ते कुम्भपर्वाणि तथा द्वादशसंख्यया:।।

सूर्य, चन्द्र और वृहस्पति देवासुर-संग्राम के समय अमृतकुंभ की रक्षा करते रहे। इन तीनों का संयोग जब विशिष्ट राशि पर होता है तब कुंभयोग आता है।

गंगाद्वारे प्रयागे च धारा गोदावरी तटे ।
कलसाख्योहि योगोहयं प्रोच्यते शंकरादिभिः।।

(१) गंगाद्वार (हरिद्वार), (२) प्रयाग, (३) धारा (उज्जयिनी), (४) गोदावरी (नासिक)—इन सभी स्थानों पर प्रति तीन वर्ष बाद कुंभयोग होता है। लगभग बारह वर्ष बाद एक-एक स्थान पर कुंभ महामेला का आयोजन होता है।

कुंभयोग का काल निर्णय

हरिद्वार में कुंभकाल :

पद्मिनीनायके मेषे कुंभराशि गते गुरौ ।
गंगाद्वारे भवेत्योगः कुंभनामा तदोत्तमः।।

वृहस्पति कुंभराशि एवं सूर्य मेष राशि जब होते हैं तब हरिद्वार में अमृत- कुंभयोग होता है।

वसन्ते विषुवे चैव घटे देवपुरोहिते ।
गंगाद्वारे च कुन्ताख्यः सुधामिति नरो यतः।।

बसन्त ऋतु में, विषुव संक्रान्ति में सूर्य जब मेष राशि में संक्रमण करता है एवं देव पुरोहित वृहस्पति कुंभराशि में आते हैं तब हरिद्वार में कुंभ मैला होता है। इस योग से मानव सुधा यानी अमृत प्राप्त करता है।

कुंभराशिगते जीवे यद्दिने मेषगेरवो ।
हरिद्वारे कृतं स्नानं पुनरावृत्ति वर्ज्जनम्।।

जिन दिनों वृहस्पति कुंभराशि में तथा सूर्य मकर राशि में रहेंगे, उन्हीं दिनों हरिद्वार में कुंभ-स्नान करने पर पुनर्जन्म नहीं होता।

प्रयाग में कुंभकाल :

मेषराशिगते जीवे मकरे चन्द्रभास्करौ ।
अमावस्या तदा योगः कुंभख्यस्तीर्थ नायके।।

वृहस्पति मेष राशि में तथा चन्द्र-सूर्य मकर राशि में जब आते हैं और अमावस्या तिथि हो तो तीर्थराज प्रयाग में कुंभयोग होता है।

नासिक में कुंभकाल :

सिंहराशिगते सूर्ये सिंहराश्यां वृहस्पतौ ।
गोदावर्यां भवेत कुम्भो जायते खलु मुक्तिदः।।

वृहस्पति और सूर्य दोनों जव कुंभ राशि पर आते हैं तब गोदावरी में मुक्तिप्रद कुंभयोग होता है।

कर्के गुरुस्तथा भानुश्चन्द्रश्चन्द्रक्षयस्तथा ।
गोदावर्यास्तदा कुम्भो जायतेहवनीमण्डले।।

कर्कट राशि में वृहस्पति, सूर्य और चन्द्र जब आते हैं तब अमावस्या तिथि को गोदावरी तट पर (नासिक) कुंभयोग होता है।

उज्जयिनी में कुंभकाल :

मेषराशिगते सूर्य्ये सिंहराश्यां वृहस्पतौ ।
उज्जयिन्यां भवेत कुम्भः सर्व्वसौख्य विवर्द्धनः।।

सूर्य मेष राशि में एवं वृहस्पति सिंह राशि में जब आते हैं तब उज्जयिनी (धारा) में सभी के लिए सुखदायक कुंभयोग आता है। चूंकि वृहस्पति सिंहराशि पर रहते हैं, इसलिए सिंहस्थ कुंभयोग के नाम से यह प्रसिद्ध है।

घटे सूरिः शशिसूर्यः कुह्याम् दामोदरे यदा ।
धारायाश्च तथा कुम्भो जायते खलु मुक्तिदः।।

तुला राशि में वृहस्पति, चन्द्र और सूर्य के एकत्रित होने पर अमावस्या तिथि के दिन धारा (उज्जयिनी) के शिप्रा तट पर मुक्तिप्रद कुंभयोग होता है।

ज्योतिष शास्त्र के अनुसार ग्रहों का शुभाशुभ फल मनुष्य के जीवन पर पड़ता है। वृहस्पति जब विभिन्न ग्रहों के अशुभ फलों को नष्ट कर पृथ्वी पर शुभ प्रभाव का विस्तार करने में समर्थ हो जाते हैं तब उक्त शुभ स्थान पर अमृतप्रद कुंभयोग अनुष्ठित होता है।

अनादिकाल से इस कुंभयोग को आर्यों ने सर्वश्रेष्ठ साक्षात् मुक्तिपद की संज्ञा दी है। इन कुंभयोगों में उक्त पुण्य तीर्थस्थानों में जाकर दर्शन तथा स्नान करने पर मानव कायमनोवाक्य से पवित्र, निष्पाप और मुक्तिभागी होता है—इस बात का उल्लेख पुराणों में है। यही वजह है कि धर्मप्राण मुक्तिकामी नर-नारी कुंभयोग और कुंभमेला के प्रति इतने उत्साहित रहते हैं।

कुंभ-मेला का इतिहास

भारत धर्मप्राण देश है। साधु-संग और धर्म लाभ के लिए शत-सहस्र भारतीय नर-नारी तमाम पवित्र तीर्थों में निष्पाप होने के लिए दर्शन करने जाते हैं। योग के उपलक्ष्य में प्रत्येक वर्ष लाखों नर-नारी तीर्थों पर इकट्ठे होते हैं। ऐसी स्थिति में सर्वश्रेष्ठ और साक्षात् मुक्तिप्रद कुम्भयोग में अगणित जन गणों का समावेश हो तो भारतीयों के लिए कोई अकल्पनीय घटना नहीं है। कुंभमेला कितना प्राचीन है, इस बारे में कोई निश्चय पूर्वक नहीं कह सकता। कौन इसका प्रथम उद्बोधनकर्ता थे, इसका पता लगाना भी कठिन है। अमृत कुंभयोग के बारे में शास्त्रों में जितनी चर्चा की गयी है, उसका उल्लेख किया जा चुका है। संभवतः आर्य जाति जितनी प्राचीन है, उतना ही प्राचीन कुंभ-मेला है।

कुंभ-महामेला से साधु-संन्यासियों का संयोग किसने किया?

लक्ष-लक्ष तपोशक्ति सम्पन्न साधु-संन्यासी और सिद्ध महापुरुषों का अपूर्व समागम कुंभमेला की विशेषता की महत्ता को पवित्र कर देता है, इसे सिद्ध करने का पहल किसने किया था? आखिर वह कौन अलौकिक प्रतिभाशाली शक्ति सम्पन्न महापुरुष था जिन्होंने इस कुंभमेला में समागत लक्ष-लक्ष नर-नारियों को त्याग-संयम, ब्रह्मचर्य का स्वरूप समझाने, आत्मज्ञान पिपासु नर-नारियों की पिपासा को मिटाने के लिए समग्र भारतवर्ष में धर्म की आवहवा संचार किया था। इसके संरक्षण के लिए भारत के तमाम साधु-संन्यासी और महापुरुषों को एकत्रित कर उनका संघटन किया और धर्म महायज्ञ का आयोजन किया था? वे थे सनातन वैदिक धर्म के पुनः प्रवर्त्तक शिवावतार शंकराचार्य।

कुंभमेला के आदि प्रवर्त्तक आचार्य शंकर नहीं थे

भारतीय जन-जीवन का इतिहास के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि आचार्य शंकर साधु-सम्मेलन के प्रवर्त्तक नहीं थे। महाभारत, भागवत, पुराणादि से ज्ञात होता है कि अनादिकाल से भारत में ऐसे सम्मेलन होते आये हैं। नैमिषारण्य, कुरुक्षेत्र, प्रभासादि पुण्य क्षेत्रों में असंख्य ऋषि-महर्षि और साधु-महात्मा एकत्रित होकर याग-यज्ञ तपोहनुष्ठान और शास्त्रार्थ करते रहे। देश तथा समाज की स्थिति, रीति, प्रकृति पर विचार-विमर्श करते हुए धर्म की आवहवा की सृष्टि और संरक्षण की व्यवस्था करते रहे। वौद्ध युग में हम देखते हैं कि बौद्ध-संन्यासियों ने समय-समय पर विभिन्न पुण्य स्थानों में "संघ महासंगीति" का अधिवेशन कर संघ, धर्म और बुद्ध की अमृतवाणी का प्रचार किया था, मानव-जाति के शाश्वत कल्याण के उपायों पर विचार करते रहे। बौद्ध सम्राट श्री हर्षवर्द्धन प्रयाग में प्रति पांचवें वर्ष 'सर्व त्याग-यज्ञ अनुष्ठित करते थे जहाँ अगणित साधु और महापुरुषों का सम्मेलन होता था जिसकी स्मृति कुंभमेला की याद दिला रही है।

आचार्य शंकर कुम्भमेला के संगठक थे

बौद्ध-धर्म के वाद जब देश में अनाचार-व्यभिचार, कदाचार तेजी से फैलने लगा तव वैदिक-धर्म के मूर्त विग्रह श्रीमत् शंकराचार्य ने अपनी अपूर्व प्रतिभा तथा आध्यात्मिक शक्ति के जरिये समस्त भारत में वेदान्त का डंका वजाया। उत्तर-दक्षिण-पूर्व-पश्चिम, भारत के चारों दिशाओं में चार मठ स्थापित कर उन्होंने संन्यासी-संघ का उद्घाटन किया। धर्म के प्रचार तथा संरक्षण के लिए कुंभयोग के अवसर पर पूर्वोक्त चारों स्थानों में उन लोगों को उपस्थित होने का आदेश दिया—उसी समय से ही वर्तमान कुंभमेला की प्रतिष्ठा हुई है। आगे चलकर धीरे-धीरे सभी सम्प्रदायों का समागम होकर यह महोत्सव परिपुष्ट और महिमान्वित होकर वर्तमान समय में विराट रूप धारण कर चुका है।

"तीर्थीकुर्व्वन्ति माधवः"—साधु-महापुरुषों के पदार्पण से ही तीर्थ पवित्रता तथा अपने नाम की योग्यता प्राप्त करता है। अस्तु लाखों की संख्या में साधु-संन्यासी जहाँ एकत्रित होते हैं, वहां का आकाश-बतास, जल-वायु, धूलकण तक पवित्र मुक्तिप्रद और धर्म भाववर्द्धक बन जाते हैं। साधु-सम्मेलन ही कुंभमेला की जीवन शक्ति है। यहां नर-नारियों का जो समूह आता है, वह तीर्थस्नान के निमित्त नहीं आते, जितना कि

साधु-महात्माओं के दर्शन की लालसा लेकर आते हैं, उनका स्पर्शन और आशीर्वाद प्राप्त करना चाहते हैं। ये जो सहस्रों की संख्या में सर्व त्यागी, तपस्वी साधु-महात्मा, जो लोग मृत्यु को जय करने के पश्चात् अमृतत्व की तलाश में व्रती हैं, इनका विराट समावेश जहां है, वहीं तो अमृत का प्रस्रवण है। इसी प्रकार कुंभमेला अमृतवर्षी है। पौराणिक कहानी का रहस्यमय रूपक इसी प्रकार वास्तविक ग्रहण कर चुका है।

कलशस्य मुखे विष्णु कण्ठे रुद्र समाश्रितः ।
मूलेतत्रस्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्थिताः।।
कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा ।
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथवर्ण।।
अंगैश्च सहिताः सर्वे कुम्भं तु समाश्रिताः ।

हरिद्वार माहात्म्य

सम्पूर्ण भारतवर्ष में हरिद्वार अति प्रसिद्ध स्थान है। सौन्दर्य, ऐतिहासिक विशिष्टता तथा पवित्रता से पूर्ण है। त्याग, संयम, तितिक्षा, वैराग्य मानो यहां मूर्त रूप धारण कर चुके हैं। इसी हरिद्वार में कभी पद मर्यादा मदमत्त प्रजापति दक्ष ने शिवहीन विराट यज्ञ के अनुष्ठान में शिव की निन्दा की थी जिसके कारण पतिप्राणा सती ने देहत्याग दिया था और दक्ष शिव के कोपानल में अपने आप भस्म हो गये थे। प्रजापति ब्रह्मा का यज्ञस्थल वही ब्रह्मकुण्ड आज भी यहां मौजूद है। साधक भगीरथ की एकान्तिक साधना से विचलित सगर-सन्ततियों के दुःख से विगलित पतित पावनी जाह्णवी इसी स्थान पर अवतरित हुई थीं। इसी स्थान पर सृष्टिकर्ता ब्रह्मा के द्वारा अनुष्ठित यज्ञ में स्वयं विष्णु प्रकट हुए थे। अभी तक वही विष्णु पद चिह्न यहां है जो आगत नर-नारियों को मोक्ष प्रदान कर रहा है। महर्षि दत्तात्रेय ने अपने तपोवल से गंगा की धारा को आवर्त्तन करते हुए अपने कुश को वापस लाये थे, इसीलिए कुशावर्त्त घाट नाम अतीत की साक्षी रूप में उस नाम को प्रमाणित कर रहा है। एक ओर गंभीरता और शांति, प्रीति और भक्ति का अपूर्व मिश्रण है जो हरिद्वार के लिए अतुलनीय है। इस मोक्षदायक सप्त भूमि के अन्यतम स्थान के बारे में कहा गया है—

केचिदुचुर्हरिद्वारं मोक्षद्वारं परे जगुः ।
गंगाद्वारंच केहप्याहुः केचिन्मयापुरीं पुनः।। (काशीखण्ड)

केदारनाथ में शिव तथा बदरीनाथ में नारायण हैं, उक्त दोनों स्थानों में जाने के लिए

इस क्षेत्र से ही जाना पड़ता है अन्य कोई रास्ता नहीं है, इसीलिए इस स्थान को हरिद्वार या हरद्वार कहा जाता है। इसी हरिद्वार से उत्तराखण्ड के विभिन्न स्थानों जैसे ऋषिकेश, लक्ष्मणझूला, देवप्रयाग, मदमहेश्वर, रुद्रनाथ, तुंगनाथ, कल्पेश्वर, रुद्रप्रयाग, श्रीनगर, कर्णप्रयाग, नन्द प्रयाग, लालसांगा, जोशीमठ, विष्णु प्रयाग, पाण्डुकेश्वर, अगस्त्याश्रम, गुप्तकाशी, त्रियुगीनारायण, शौनक प्रयाग, उत्तरकाशी, गंगोत्री, गोमुख, यमुनोत्री, गौरीकुण्ड आदि तीर्थस्थानों में जाया जाता है। भगीरथ की तपस्या से प्रसन्न होकर गंगा भी हरिद्वार के क्षेत्र में अवतरित हुई। यही कारण है कि कुछ लोग इस क्षेत्र को गंगाद्वार भी कहते हैं। सती ने यहां मायिक शरीर त्याग किया था, इसी कारण इस स्थान को मायापुरी कहते हैं–

गंगाद्वारे कुशावर्त्ते विल्वके नीलपर्व्वते ।
स्नात्वा कनखले तीर्थे पुनर्जन्म न विद्यते।।

हरिद्वार के प्रधान पुण्यस्थलों गंगाद्वार, कुशावर्त्त विल्वकेश्वर, नीलपर्वत तथा कनखल में स्नान करने से पुनर्जन्म नहीं होता। कनखल के वारे में कहा जाता है–

खलः को नाम मुक्तिं वै भजते तत्र मज्जनात् ।
अतः कनखलं तीर्थं नाम्ना चक्रु मुनीश्वराः।।

ऐसा कौन खल है जो इस स्थान पर स्नान करने से मुक्ति नहीं पा सकता? ऋषियों ने इसीलिए इस स्थान का नाम कनखल रखा है। वर्तमान समय में यह नाम इस क्षेत्र के अन्तर्गत विभिन्न स्थानों के अर्थ में समझा जाता है। इस स्थान की लम्बाई ७ मील और चौड़ाई आधा मील है, कहीं-कहीं चौथाई मील है और कहीं-कहीं उससे भी कम है। इस स्थान के एक ओर गंगा देवी और दूसरी ओर नभचुम्बी पर्वतमालाएं हैं। इनके अलावा 'बेलवाला द्वीप,' 'रोरी द्वीप' तथा कनखल के उस पार विस्तृत रेतीली भूमि है। मुल्क के बंटवारे के बाद यहां अनेक शरणार्थी आकर बस गये हैं। फलस्वरूप सरकारी उद्योगों के कारण इस क्षेत्र का काफी विस्तार हो गया है।

कुंभयोग पर हरिद्वार में गंगा-स्नान करने का अमोघ फल है–

सहस्रं कार्त्तिके स्नानं माघे स्नानं शतानि च ।
वैशाखे नर्म्मदा कोटिः कुम्भस्नानेन तत्फलम्।।
अश्वमेध सहस्राणि वाजपेयशतानि च ।
लक्षं प्रदक्षिणां पृथ्वयाः कुम्भस्नानेन तत्फलम्।।

कार्त्तिक मास में सहस्र वार, माघ में शत बार गंगा स्नान और वैशाख में करोड़ वार नर्मदा में स्नान करने से जो फल होता है, सहस्र अश्वमेध और शत वाजपेय यज्ञ से जो फल होना है, लाख बार पृथ्वी प्रदक्षिणा करने से फल मिलता है, वह एक वार कुम्भस्नान से प्राप्त होता है।

मायापुर, कनखल,ज्वालापुर, भीमगोड़ा, सतीकुण्ड, विल्वकेश्वर, कुशावर्तघाट, गोघाट, श्रवणनाथ मंदिर, गीता भवन, परमार्थ निकेतन, सप्तऋषि, सप्तधारा, दक्षेश्वर महादेव, रामघाट, नीलधारा, चण्डीदेवी, मनसा देवी, ब्रह्मकुण्ड आदि हरिद्वार के दर्शनीय तीर्थ हैं। श्री रामकृष्ण मिशन सेवाश्रम, भोलानन्द संन्यास सेवाश्रम, मां आनन्दमयी का आश्रम, आर्य समाजियों का गुरुकुल विश्व विद्यालय, सनातनियों का ऋषिकुल विद्यालय, श्रीमन्मुनिमण्डल महाविद्यालय तथा अन्य अनेक साधु-संन्यासियों के आश्रम हरिद्वार में हैं। देवताओं का क्रीड़ास्थल, साधुओं की साधना भूमि, तपस्वियों की तपोभूमि, ऋषियों का ध्यान मंदिर, योगियों का योगासन है—देवात्मा हिमालय। हरिद्वार के सहित इसकी उपत्यकाओं, अधित्यकाओं और प्रत्येक शिखरों पर कितने तीर्थ हैं, इसका लेखा-जोखा कौन बता सकता है?

ब्रह्मकुण्ड घाट—हरिद्वार क्षेत्र के स्थानों में सबसे अधिक प्रसिद्ध ब्रह्मकुण्ड है। इस स्थान पर ही प्रजापति ब्रह्मा ने यज्ञ किया था जिसमें स्वयं भगवान विष्णु आविर्भूत हुए थे। कुंभ योग पर इस कुंड में स्नान करने की होड़ में दंगा-हंगामा होते थे। साधु सम्प्रदाय में कौन पहले स्नान का अधिकारी है, इस प्रश्न को लेकर भयानक झगड़ा और मारपीट होते थे। भारत के प्रधान मठाधिकारियों तथा राजाओं ने मिलकर इसका उपाय ठीक कर दिया है। किसके बाद कौन स्नान करने का अधिकारी होगा। इस क्रम के अनुसार शंकराचार्य के दसनामी संन्यासियों को सबसे पहले स्नान करने का अधिकार मिला। नागा संन्यासी भी दसनामी संन्यासियों में आते हैं। इस कुण्ड के घाट पहले काफी छोटे थे। आगे चलकर अम्बर नरेश ने काफी बड़ा बनवाया था। कालक्रम से अब काफी क्षतिग्रस्त हो गया है। अब इधर सरकार तथा कुछ राजाओं ने इस कुण्ड और उसके घाटों का जीर्णोद्धार कराया है। भीमगोड़ा से गंगास्रोत को कुशलता पूर्वक इस कुण्ड के भीतर प्रवाहित किया गया है। ध्यान, जप, पूजा, अर्चना आदि करने के लिए एक सुदृश्य मंच बनाया गया है। पुराणों के अनुसार महादेव की तपोस्थली "हर की पैड़ी" टापू को पक्के पुल से जोड़ दिया गया है। कुण्ड के मध्य और बगल में पुराणोक्त ब्रह्मा के यज्ञस्थल में "हरि की चरण पैड़ी" नामक प्रस्तर निर्मित मंदिर में श्री हरिपद चिह्न मौजूद है। कुण्ड में स्नान करने के पश्चात् इस मंदिर की प्रदक्षिणा करना यात्रियों के लिए आवश्यक है। कुण्ड का व्यास ६०-७० हाथ है। नीचे का हिस्सा पत्थर से पक्का किया गया है और

सर्वत्र छाती भर जल रहता है। पतित पावनी इस कुण्ड के भीतर आकर प्रबल वेग से प्रवाहित होती हैं। इस कुण्ड का दृश्य अत्यन्त मनोरम है।

कुशावर्त घाट—ब्रह्मकुण्ड के समीप ही कुशावर्त घाट है। महर्षि दत्तात्रेय का कुश जब गंगा में वह जाने लगा तव अपने तप के माध्यम से उन्होंने गंगा की धारा को प्रत्यावर्त्तन कराकर पुनः कुश को प्राप्त किया था।

हरिद्वार में गंगा त्रिधारा में प्रवाहित हैं। प्रसिद्ध नीलधारा चण्डी पहाड़ की तलहटी से वहती हैं, दूसरी धारा 'हर की पैड़ी' द्वीप के पूर्वीतट से टकराती हुई धावमान है और तीसरी धारा ब्रह्मकुण्ड तथा कुशावर्त घाट से प्रवाहित है। यात्रीगण यहीं स्नान तर्पण, आह्णिक, पूजा, श्राद्ध आदि करते हैं। मृतात्मा की अस्थियां मंत्रोच्चार के साथ प्रवाहित करते हैं।

भीमकुण्ड— कुंभ में आने वाले सभी यात्री इस कुण्ड में स्नान करते हैं। पुराण में इस कुण्ड का महत्व है। इस कुण्ड में भीमेश्वर महादेव नामक एक वृहद् शिवलिंग है। इस स्थान को 'भीम गदा,' 'भीम गड़ा' या 'भीम घोड़ा' कहते हैं। कहा जाता है कि स्वयं भीम ने यहां भीमेश्वर शिवलिंग की प्रतिष्ठा की थी। कुछ लोगों की मान्यता है कि भीम के घोड़े की खुराघात से यहां कुण्ड बन गया था। कुण्ड का व्यास ४० हाथ है। पानी छाती भर है। तल प्रदेश पक्का है। इस कुण्ड के नीचे से पानी वरावर निकलकर एक नाला के जरिये गंगा में गिरता है।

दक्षेश्वर शिव मंदिर—कनखल के गंगा तट पर यह मंदिर है। इस मंदिर में दक्षेश्वर शिव प्रतिष्ठित हैं। कुण्ड में स्नान करने वाले यात्री यहां दर्शन, स्पर्शन और पूजार्चन करते हैं।

सती कुण्ड—प्रजापति दक्ष के शिव-हीन यज्ञ में पति-निन्दा से दुःखी, पति परायण सती ने योग वल से इसी स्थान पर अपने पाप-शरीर को भस्मीभूत किया था। उसी पुण्य कहानी को स्मरण करते हुए यात्री इस कुण्ड में स्नान कर शुद्ध होते हैं।

भारत सेवाश्रम संघ—हरिद्वार स्टेशन से दो फलांग दूर बस स्टैण्ड के समीप देवपुरा में यह आश्रम है। विराट आश्रम, मंदिर, यात्री निवास, दातव्य चिकित्सालय हैं।

पता—पोस्ट वाक्स २३, फोन—३६३

हरिद्वार तीर्थ-दर्शन एवं उत्तराखण्ड यात्रा के लिए यहां यात्रियों को आश्रय तथा तीर्थ कृतादि में सहायता दी जाती है। संघ के अन्य विवरण परिशिष्ट में दिया गया है।

धन्यानां पुरुषाणां हि गंगाद्वारस्थे दर्शनम् ।
विशेषतस्तु मेषार्के संक्रमेऽतीव पुण्यदे।।

प्रयाग माहात्म्य

भारतीय हिन्दुओं के लिए अन्यतम महातीर्थ है– तीर्थराज प्रयाग। गंगा सर्वत्र पतित पावनी, सद्यः पापहारिणी है। यहां पतित्त पावनी, सुरधनी से पुण्यदायिनी यमुना और सरस्वती का संगम हुआ है और नाम हो गया त्रिवेणी। इसीलिए कहा गया–

सर्वत्र सुलभा गंगा
त्रिषु स्थानेषु दुर्ल्लभा।
हरिद्वारे प्रयागे च
गंगा सागर संगमे ।

गंगा सर्वत्र ही पुण्यदा है, पर हरिद्वार, प्रयाग और गंगा सागर में पुण्यतरा है।

प्रजापति व्रह्मा ने वेद लाभार्थ इसी स्थान पर अश्वमेध यज्ञ किया था, इसीलिए इस स्थान का नाम प्रयाग हुआ।

एतत् प्रजापतेः क्षेत्रं
त्रिषु लोकेषु विश्रुतम।
न शक्यं कथितं राजन
त्रिषु लोकेपु विश्रुतम।

प्रयाग तीर्थ का नाम लेते ही समस्त पापों का विनाश हो जाता है, इसकी चर्चा मत्स, कुर्म और पद्म पुराण में मुक्तकंठ से की गयी है।

प्रयागं स्मरमानस्य यान्ति
पापानि संक्षयं।
दर्शनात्तस्य तीर्थस्य सर्व्वपापैः प्रमुच्यते ।
मृत्तिकालभनाद्वापि नरः पापात् प्रमुच्यते।।

तीनों लोकों में प्रसिद्ध है कि प्रयाग प्रजापति का स्थान है। इसके स्मरण से ही सभी पापों का क्षय हो जाता है, इसके दर्शन से सभी प्रकार की दुष्कृतियों का नाश होता है और यहां की मिट्टी के दर्शन से पापमुक्ति।

पंचकुंडानि राजेन्द्र
तेषां मध्ये तु जाह्णवी।
प्रयागस्य प्रवेशाद्वै पापं
नश्यति तत्क्षणात्।।

प्रयागधाम जो पंचकुंड हैं, उसमें जाह्णवी स्वयं विराजमान है। उसमें अवगाहन करने से ही समस्त पापों का विमोचन हो जाता है।

प्राचीनकाल में राजाओं के राज्याभिषेक काल में प्रयाग के पुण्यवारि की आवश्यकता होती थी।

"गंगा-यमुना का संगमस्थल होने के कारण यह तीर्थ देवता, दानव, गंधर्व और ऋषियों का प्रिय निकेतन है। अगर एक पयस्विनी गाय यहां किसी श्रोत्रिय ब्राह्मण को दान किया जाय तो दाता को पंच कोटि फल लाभ होता है। देश, विदेश या अरण्य आदि किसी भी स्थान पर मृत्यु के समय प्रयाग नाम स्मरण करने पर ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती है। पुण्य के समाप्त होने तथा स्वर्गलोक परिभ्रष्ट होने पर भी जम्बु द्वीप में आधिपत्य प्राप्त होता है। इस स्थान पर स्नान, दान और तर्पण करने से देवता तथा पितृ पुरुष प्रसन्न होते हैं।"

माघ मास में इस तीर्थ पर सभी तीर्थों का समागम होता है, इसलिए इस स्थान पर सभी तीर्थों का फल प्राप्त होता है–

"माघे मासि गमिष्यन्ति गंगायमुनासंगमं
गवां शतसहस्रस्य सम्यक दत्तस्य यत् फलं।
प्रयागे माघमासे वै त्र्यहं स्नानस्य तत् फलं।"

माघ-मास में यहां तीन दिन स्नान करने से लक्ष गोदान का पुण्य प्राप्त होता है। माघी-स्नान भारतीय हिन्दुओं के निकट पवित्र और पुण्यप्रद है। इनमें प्रयाग में माघी स्नान करना और भी प्रसिद्ध है। यही वजह है कि इस पुण्य क्षेत्र में माघ मेला के अवसर पर लाखों स्नानार्थी आते हैं।

श्यामो वटोथश्यामगुणं वृणोति
स्वच्छायया श्यामलया जनानाम्।
श्यामः श्रमं कृन्तति यत्र द्रष्टः
स तीर्थराज जयति प्रयागः।।

यहां स्थित श्यामल अक्षयवट अपनी स्निग्ध छाया के द्वारा मानव को दिव्य सत्वगुण प्रदान करता है। जहां पर भगवान माधव अपने दर्शनार्थियों के पाप ताप को मिटा देते हैं, उस तीर्थराज प्रयाग की जय हो।

ग्रहाणां च यथा सूर्यो नक्षत्राणां यथा शशी ।
तीर्थानाम् उत्तमं तीर्थं प्रयागख्यमनुत्तमम्।।

ग्रहों में जैसे सूर्य, नक्षत्रों में शशि है, उसी प्रकार तीर्थों में प्रयाग सर्वोत्तम है।

गोघ्नोवापि च चाण्डालो दुष्टो वा दुष्टचेतनः।
बालघाती तथाथ विद्वान म्रियते तत्र वै यदा।
स वै चतुर्भुजो भूत्वा वैकुण्ठे वसते चिरम् ।

गोघाती, चाण्डाल, शठ, दुष्टचेता, बालघाती, मूर्ख; इनमें सेकिसी का अगर प्रयागधाम में मृत्यु होती है तो वह चतुर्भुज रूप धारण कर अनन्तकाल वैकुण्ठवास करता है। प्रयाग के देवस्थानों में त्रिवेणी, विन्दुमाधव, सोमेश्वर, भरद्वाज, वासुकि नाग, अक्षयवट और शेषनाग है।

ॐ संसारवृक्षशस्त्राय सर्व्वपापक्षयाय च ।
अक्षयाय बह्मदात्रे नमोहक्षाय बटाय ते।।
ॐ नमो नमो व्यक्त रूपाय महाप्रलयप्रणेत्रे ।
महाद्रुमोपविष्टाय न्याग्रोधायनमो नमः ।
ॐ अमरत्त्व महाकल्पे हरेश्चायतनं वट ।
न्याग्रोध हर मे पापं कल्पवृक्षको नमोहस्तुते।।

यह प्रार्थना करते हुए अक्षय वट की पूजा, प्रदक्षिणा और बाद में प्रणाम करना चाहिए। माघ मास में कल्पवास के समय मुक्ति कामना का संकल्प करते हुए ब्रह्मचर्य व्रत धारण करना चाहिए। प्रति दिन गंगा-स्नान, विष्णु पूजा, विष्णु मंत्र जप, ध्यान तथा हविष्यान्न भोजन करना चाहिए।

ऐतिहासिक और राजनीतिक विशिष्टताएं

प्रजापति का यज्ञक्षेत्र होने के कारण इसकी ख्याति है। प्रयाग शत अश्वमेधकारी महाराज नहुष तथा उनके वंशधरों की राजधानी थी। रामायण-युग में यहां भरद्वाज, च्यवन, अगस्त्य आदि महर्षियों की तपःस्थली थी। ग्रीक दूत मेगास्थनिज एवं चीनी परिव्राजक यात्री युआन च्यांग ने इस स्थान की प्रशंसा अपनी रचना में मुक्तकंठ से की है। सुलतान महमूद के समकालीन आबूरेहन और अकबर के समसामयिक अब्दुल कादिर के ग्रंथों में इस स्थान उल्लेख है। किले के भीतर प्रस्तर निर्मित अशोक स्तम्भ इसकी प्राचीनता के साक्षी हैं। ई० पू० २४२ वर्ष महाराज चक्रवर्ती अशोक के स्तम्भ में अनुशासन लिपि उत्कीर्ण है। इनके बाद समुद्रगुप्त और सम्राट जहांगीर द्वारा उत्कीर्ण विवरण दिखाई देता है।

मुसलमानों के भारत-विजय के पश्चात् यह क्षेत्र पठानों के अधिकार में था। जब इस नगर पर सम्राट अकबर का आधिपत्य हुआ तब उसने इस नगर का नाम रखा—अल्लाहबाद। उसने प्राचीन हिन्दू स्थापत्य को तोड़कर वहां नवनिर्मित किला और महल बनवाया। सुप्राचीन अक्षयवट और अनेक देवी-देवताओं के मंदिर किले के भीतर आ गये। समदर्शी होने के कारण अकबर के शासनकाल में हिन्दू तीर्थकृत पर कोई चोट नहीं पहुँची। अल्लाहाबाद नाम घिसते-घिसते इलाहाबाद बन गया।

इलाहाबाद की प्रमुखता

इस नगर का पौराणिक महत्व अनिर्वचनीय है। इसका ऐतिहासिक महत्व अतुलनीय है। मौजूदा समय में यह नगर अत्यन्त समृद्धशाली और व्यवसायिक केन्द्र है। अतीत में यह नगर आगरा, लखनऊ की तरह उत्तर प्रदेश की राजधानी था। हाईकोर्ट, विश्व विद्यालय, आनन्द भवन, सचिवालय, स्कूल-कालेज, सैनिक-निवास आदि सभी कुछ यहां हैं। इसके अलावा अनेक ऐतिहासिक स्मृतियां भी हैं। अक्षयवट, भरद्वाज मुनि का आश्रम, अशोक स्तंभ, मुगलों का किला, खण्डहर वाला महल, रमणीय उद्यान, समाधि, खुसरो बाग आदि दर्शकों को आकर्षित करते हैं।

इलाहाबाद के दर्शनीय स्थल

१—**त्रिवेणी संगम**—प्रयाग की क्षेत्राधिष्ठात्री देवी ललिता तथा भैरव-भव हैं। शक्ति के ५१ पीठस्थानों में एक है।

यहा गंगा-यमुना का संगम हुआ है। गंगा की श्वेतधारा और यमुना की कृष्णधारा अपनी स्वतंत्र रंग को अक्षुण्ण बनाये हुए हैं। अन्तः सलिला सरस्वती भी गंगा-यमुना के साथ मिल गयी है। संगम-स्थल का प्राकृतिक दृश्य मनोरम है। यहा नदी की गहराई कम है। त्रिवेणी घाट से शहर तीन मील दूर है। संगम के समीप ही अकबर द्वारा निर्मित किला है। नदी के उस पार प्राचीन प्रतिष्ठानपुर का भग्नावशेष 'झूसी' नामक स्थान है। इसी संगम स्थल की रेतीली भूमि पर प्रति बारह वर्ष के अन्तराल से कुंभमेला का महासमारोह होता है। इसके अलावा प्रति छः वर्ष बाद अर्द्ध कुंभ होता है जबकि हरिद्वार, नासिक या उज्जयिनी में ऐसा नहीं होता। सच तो यह है कि शास्त्रों में अर्द्ध कुंभ के बारे में कोई विशेष बात नहीं है। यह ठीक है कि प्रति छः वर्ष बाद मिलन का अभाव यह दूर करता है और जनमानस में धार्मिक भावना उत्पन्न करता है।

२—किला सन् १५८३ ई० में मुगल बादशाह ने यहां यह किला बनवाया था। किले के भीतर अक्षय वट तथा अन्य देवी-देवताएं हैं।

३—खुसरो बाग—जहांगीर का विद्रोही पुत्र खुसरो और उसकी मां की कब्रें इस बाग के भीतर है। अकबर ने इसे बनाया और जहांगीर ने इसे संपूर्ण किया था।

४—यमुना का पुल—यमुना पर रेलवे का जो पुल है, ऊपर से रेल आती-जाती है और नीचे से जनता तथा सवारी गाड़ियां जाती है।

५—कोटीश्वर महादेव—ताराइल गांव जो कि यमुना के उस पार है, यहां सोमेश्वर मंदिर है। इसी ताराइल गांव में बल्लभभट के निवास स्थान में महाप्रभु चैतन्य ठहरे थे।

६—विविध—भरद्वाज आश्रम, वेणीमाधव मंदिर; नागवासुकि मंदिर, अलोपी माता का मंदिर, सोमेश्वर मंदिर, शिवकुटि मंदिर आदि हैं। इनके आलावा क्वींस कालेज, विश्व विद्यालय आदि स्थान हैं।

माघ वृषगते जीवे मकरे चन्द्र भास्करी।
अमावस्यां तथा योगः कुम्भाख्यः तीर्थनायके।।
मकरे च दिवानाथे वृषभे वृहस्पतौ।
कुम्भयोगो भवेत्तत्र प्रयागेह्यति दुर्लभ।।

नासिक माहात्म्य

महाराष्ट्र प्रान्त का एक अन्यतम जिला नासिक है। गोदावरी नदी के दक्षिणी तट पर बसा हुआ है। शहर से नदी का उद्गमस्थल लगभग ३० मील दूर है। गंगा, यमुना, सरस्वती, नर्मदा, सिन्धु, कावेरी नदी की तरह गोदावरी भी हिन्दुओं की दृष्टि में परम पवित्र तथा मोक्षप्रद है। शहर में नदी के दोनों किनारों पर अनेक मंदिर हैं। नदी के भीतर भी कई मंदिर हैं। इस नदी की बायीं ओर रामायण में वर्णित पंचवटी वन है। पिता द्वारा दिये गये वचन का पालन करने के लिए वनवासी भगवान रामचन्द्र, सीता और लक्ष्मण के साथ यहीं पर स्थायी कुटिया बनाकर रहते थे। इसी गोदावरी नदी में श्री रामचन्द्र नित्य प्रातःकाल सीता और लक्ष्मण के साथ स्नान करते थे। इसी नदी के जल से देवता तथा पितृ पुरुषों का तर्पण और सूर्य एवं देवी-देवताओं का स्तव किया था। कवि वाल्मीकि ने गोदावरी नदी को 'रम्या' कहा है। यह नदी पद्मशोभिता रहती थी। श्री राम ने भी गोदावरी नदी को नदियों में श्रेष्ठ कहा है। इस नदी में नित्य स्नान करना सीता देवी को प्रिय था—''गोदावरीयं सरितां वरिष्ठा प्रिया प्रियाया मम नित्यकालम्''। यहां

स्थित एक गुफा में सीता देवी रहती थीं। यहीं पर श्री राम के अनुज लक्ष्मण ने कामार्त्त सूर्पनखा की नाक को काटा था। शायद इसीलिए इस स्थान का नाम हुआ है—नासिक। रावण ने पंचवटी वन से सीता का हरण किया था। शहर से कुछ दूर ''पाण्डव लेना'' नामक गुफाएं हैं जिसके बारे में कहा जाता है कि बौद्ध संन्यासियों ने इनका निर्माण किया था। सन् १७६० ई० में मराठों ने मुगलों को परास्त कर इस क्षेत्र को अपने अधिकार में ले लिया था। मराठों द्वारा निर्मित कुछ पहाड़ी किले आज भी यह सुरक्षित दशा में मौजूद हैं। पौराणिक तथा ऐतिहासिक दृष्टि से नासिक का अपना एक अलग महत्व है।

नासिक के त्र्यम्बकेश्वर शिव की गणना द्वादश ज्योतिर्लिंगों में की जाती है। नासिक की गोदावरी में स्नान करने का प्रमुख स्थल है—रामकुण्ड। ब्रह्म वैवर्त पुराण में कहा गया है कि प्राचीनकाल में एक ब्राह्मणी योगाभ्यास और तपस्या करते-करते गोदावरी नदी बन गयी। गोदावरी नदी की सात धाराएं हैं। यथा—वशिष्ठा, कौशिकी, वृद्धा, गौतमी, भारद्वाजी, आत्रेयी और तुल्या। गोदावरी में नित्य स्नान और आहार-विहार महापुण्य जनक है। *इस नदी के तट पर वाराह तीर्थ, रामतीर्थ, लक्ष्मण तीर्थ, गोवर्द्धन तीर्थ तथा सरस्वती तीर्थ प्रमुख हैं। आयुर्वेद के मतानुसार गोदावरी का जल गंगाजल की तरह पवित्र और स्वास्थ्यप्रद है।

सिंहे गुरुः तथा भानुः चन्द्रश्चन्द्रक्षयस्तथा ।
गोदावर्या तथा कुम्भो जायते ऽवनिमण्डले।।

---

* ततो गोदावरीं प्राप्य नित्यासिद्धनिर्येविताम् ।
राजसूयमवाप्नोति वायुलोकं च गच्छति।।
गंगाया वारिणाहयोन हिरण्येन तथैव च ।
सर्व्वेभ्योप्यधिकं दिव्यममृतं गौतवीजलम्।।
सप्त गोदावरी स्नात्वा नियतो नियताशनः ।
महापुण्यमवाप्नोति देवलोकं च गच्छति।। —महापद्म

उज्जयिनी माहात्म्य

प्राचीनकाल में यह नगर ग्वालियर राज्य के अधिकार में ही नहीं, बल्कि मालव-प्रदेश की राजधानी था। इन दिनों मध्य प्रदेश के अन्तर्गत है। इस नगर के भिन्न-भिन्न नाम हैं—विशाला, अवन्ती, अवन्तिका आदि। अयोध्या, मथुरा, माया (हरिद्वार), काशी, कांची, द्वारावती की तरह अवन्ती, अवन्तिका या उज्जयिनी तीर्थ भी हिन्दुओं के निकट पवित्र तीर्थ है—

अयोध्या मथुरा माया काशी कांची अवन्तिका।
तीर्थं द्वारावती चैव सप्तैते मोक्षदायिका।।

यह नगरी धार्मिक दृष्टि से प्रसिद्ध और अत्यन्त प्राचीन है। महाभारत में इस नगर का उल्लेख है। यह नगरी महाराजा विक्रमादित्य की राजधानी थी। प्रसिद्ध संस्कृत कवि कालिदास उनकी सभा के नवरत्नों में सप्तम रत्न थे। कुमार सम्भव, ऋतुसंहार, रघवंश, मेघदत, नलोदय आदि काव्य, अभिज्ञान शाकुन्तल, विक्रमोर्वशी, मार्लविकाग्निमित्र आदि नाटक, द्वात्रिंशत्पुत्तलिका आदि उपाख्यान कविवर कालिदास की काव्य प्रतिभा और साहित्यिक कृतियों के अमर दृष्टान्त हैं। उज्जैन केवल आध्यात्मिक तीर्थ ही नहीं, बल्कि काव्य तथा साहित्य के क्षेत्र में उज्ज्वल पीठस्थान है। यह नगर कई बार हिन्दू राजाओं मुसलमानों के अधिकार में आया था। उज्जयिनी में अनेक हिन्दू मंदिर हैं। कालीदह महल से कुछ दूर स्थित प्राचीन तोरण द्वार के बारे में कहा जाता है कि यहीं सम्राट विक्रमादित्य का महल था जो खण्डहर के रूप मौजूद है। शहर के दक्षिण दिशा में एक मानमंदिर है जिसका निर्माण जयपुर नरेश जयसिंह ने बनवाया था। यह नगर शिप्रा नदी के किनारे बसा हुआ है। शिप्रा नदी विंध्य पर्वत से निकलकर चम्बल नदी से जा मिली है और चम्बल आगे जाकर यमुना से मिल गयी है। वर्तमान समय में शिप्रा क्षीण स्रोता है। लेकिन इसकी महिमा में कोई कमी नहीं हुई है। इस क्षेत्र में इसे गंगा के बराबर समझा जाता है।

महाकाल: सरिच्छिप्रागतिश्चैव सुनिर्म्मला।
उज्जयिन्यां विशालाक्षि वास: कस्य न रोच्यते।।
स्नानं कृत्वा नरो यस्तु महानद्यां हि दुर्ल्लभम्,
महाकाल नमस्कृत्य नरो मृत्युं न शोचयेत्।
मृत: कीट: पतंगो वा रुद्रस्यानुचरोभवेत्।।

अर्थात् जहां भगवान महाकाल हैं, जहां शिप्रा नदी है और इसी वजह से जहां निर्मल गति प्राप्त होती है, उस उज्जयिनी नगरी में किसका मन रहने को नहीं करेगा? महानदी शिप्रा में स्नान करने के पश्चात् शिव का दर्शन तथा पूजन करने पर मृत्यु-भय नहीं रहता। यहां मृत कीट-पतंग तक रुद्र के अनुचर बन जाने का सौभाग्य प्राप्त करते हैं।

शिप्रा नदी में स्नान करने लायक चार घाट हैं। शहर के स्थित रामघाट सबसे विशाल घाट है। शेष तीन घाटों के नाम हैं—नरसिंह घाट, गंगा घाट और मंगल घाट। कुंभ के अवसर पर जिस दिन, मुख्य स्नान होता है, सभी सम्प्रदाय के साधु रामघाट में जुलूस के साथ आते हैं और यहीं स्नान करते हैं। मुख्य स्नान के दिन हैं—चैत्र संक्रान्ति, अमावस्या, अक्षय तृतीया, शंकर-जयन्ती और वैशाखी पूर्णिमा। वैशाखी पूर्णिमा को सर्वश्रेष्ठ स्नान माना गया है। इस स्नान को शाही-स्नान कहा जाता है। कुंभ मेला के अवसर पर शिप्रा नदी के दोनों किनारे भारत के सभी मठ और अखाड़े के साधुओं के डेरा-तम्बू या झोपड़ियां लग जाते हैं। जैन, बौद्ध, सिख सम्प्रदाय के सन्त भी इस महोत्सव में भाग लेने आते हैं। उज्जयिनी शहर से चार मील दूर गंगा घाट तथा मंगल घाट के निकट वैष्णव साधुओं का शिविर लगता है। मुख्य सड़क के दोनों ओर दत्तात्रेय अखाड़ा के मण्डलेश्वर और महामण्डलेश्वर विराजते हैं। नागा साधुओं का डेरा शिप्रा नदी के तट पर लगता है। सन् १९८० ई० में भारत सेवाश्रम संघ का शिविर और सेवाकेन्द्र की स्थापना दत्तात्रेय अखाड़े में किया गया था।

उज्जयिनी स्थित महाकाल शिव द्वादश ज्योतिर्लिंगों में अन्यतम हैं। यहां वे दक्षिणमूर्ति हैं। दक्षिणमूर्ति शिव का महत्व केवल यहीं दिखाई देता है। मंदिर शहर के भीतर है। उज्जयिनी की हरसिद्धि (काली माता) का मंदिर भी काफी प्राचीन है। इन्हें काफी जाग्रत माना जाता है। शक्ति के ५१ पीठों में यह अन्यतम है। यहां देवी का कूर्पर (कुहनी) गिरा था। यह भी कहा जाता है कि राजा विक्रमादित्य नित्य यहां इस मंदिर में पूजा करते थे। यहां का सन्दिपनी आश्रम दर्शनीय है। द्वापर युग में इसी आश्रम में श्रीकृष्ण और बलराम पढ़ने के लिए आये थे। भागवत पुराण में इसका उल्लेख है। शिप्रा नदी के किनारे भैरवगढ़ के पूर्व प्राचीन सिद्धवट है। इस वृक्ष को अत्यन्त पवित्र समझा जाता है। उज्जयिनी से दो मील की दूरी पर गढ़ कालिका मंदिर है। प्राचीन अवन्तिका नगरी काफी पहले इधर बसी हुई थी। कहा जाता है कि महाकवि कालिदास नित्य इस मंदिर में आकर पूजा करते थे। महाराज हर्षवर्द्धन ने इस मंदिर का जीर्णोद्धार कराया था। इनके अलावा उज्जयिनी के प्रमुख मंदिरों में गोपाल मंदिर, चित्रगुप्त मंदिर, नवग्रह मंदिर, महागणेश मंदिर, भर्तृहरि गुहा, काल भैरव मंदिर, ब्रह्मकुण्ड और मंगलनाथ

मंदिर दर्शनीय है। यहां पंचमुखी हनुमानजी की मूर्ति है। कुंभयोग में लोग यहां आकर पंचक्रोशी परिक्रमा करते हैं। महाकालेश्वर मंदिर को केन्द्र बनाकर इसके चारों ओर १२३ किलोमीटर मार्ग को पंचक्रोश के व्यास में परिक्रमा करते हैं। इस परिक्रमा में पांच दिन लगते हैं। अनेक साधु महात्मा भी परिक्रमा में भाग लेते हैं। यात्रा पथ में अनेक शिव मंदिर तथा अन्य देवस्थान हैं जैसे पिंगलेश्वर, दुर्धरेश्वर, महाकालेश्वर, कायवरनेश्वर, नागचन्द्रेश्वर और त्रिवेणी आदि।

उज्जयिनी आने के लिए भोपाल होकर आना पड़ता है। भोपाल का सीधा संबंध कलकत्ता, बम्बई, दिल्ली आदि से हाल में जुड़ गया है। यहां आने के लिए रेलवे विभाग से जानकारी प्राप्त किया जा सकता है।

विभिन्न सम्प्रदाय के साधु-संन्यासी

भारत विचित्र देश है। यहां हर प्रकार की विचित्रताएं मौजूद हैं। जाति, भाषा, समाज, सम्प्रदाय, धर्ममत सभी विषयों में पर्याप्त विचित्रताएं हैं। हमारे यहां के धर्म तथा उपासकों में जितनी विभिन्नताएं और विचित्रताएं हैं, उतना अन्य किसी विषय में नहीं हैं। भारत में कितने प्रकार के धर्म और साधन प्रणालियां हैं, इन सबके बारे में सविस्तार निर्णय करना दु:साध्य है। कुंभमेला में इन सभी प्रकार की विचित्रताओं का अपूर्व समावेश होता है। भारत के कोने-कोने से सभी सम्प्रदाय के लोग, साधु-महात्मा आते हैं। यहां उनमें से कुछ लोगों के बारे में उल्लेख किया जा रहा है।

शैव

१. दसनामी २. दण्डी ३. घरवारी दण्डी ४. कुटीचक ५. वहदक, हंस, परमहंस ६. संन्यासी ७. नागा ८. आलेखिया ९. दंगली १०. अघोरी ११ उर्ध्ववाहु, आकाशमुखी, नखी, ठाड़ेश्वरी, उर्ध्वमुखी, पंचधूनी, मौनव्रती, जलशय्यी, जलधारा-तपस्वी १२. कड़ालिंगी १३. फरारी, दुधाधारी, अलुना १४. औघड़, गुदड़, सुखड़, रुखड़, भुखड़ १५. शरशयी १६. घरवारी संन्यासी १७. ठिकरनाथ १८. सरभंगी १९. ब्रह्मचारी २०. योगी, कनफटा योगी, औधड़ योगी, अघोरपन्थी योगी २१. योगिनी और संयोगी २२. लिंगायत २३. भोपा २४. दशनामी भांट २५. मच्छेन्द्री, शारंगीहार, डुरीहार, भर्तृहार, काणिपा योगी।

वैष्णव

१. श्री सम्प्रदाय २. रामादूत् ३. कबीरपन्थी ४. खाकी ५. ममुकदासी

६. दादुपन्थी ७. रुईदासी ८. सेनपन्थी ९. मधवाचारी १०. वल्लभाचारी ११. मीराबाई १२. निमाइत १३. विट्ठल भक्त १४. चैतन्य सम्प्रदाय १५. स्पष्ट दायक १६. वत्ताभजा १७. राम वल्लभी १८. साहेब धनी १९. वाउल २०. न्याड़ा २१. दरवेश २२. साईं २३. आउल २४. साध्विनी २५. सहजी २६. खुशी विश्वासी २७. गौरवादी २८. बलरामी, हजरती, गोवराई, पागल साथी, तिलक दासी, दर्पनारायणी, अतिबड़ी २९. राधा वल्लभी, ३०. सरवीताबक ३१. चरणदासी ३२. हरिश्चन्दी ३३. माध्मपन्थी, माधवी ३४. चूहड़पन्थी ३५. कूड़ापन्थी ३६. वैरागी ३७. नागा।

शाक्त

१. चलिया २. करारी ३. भैरवी और भैरव ४. शीतला पंडित ५. पश्वाचारी ६. वीराचारी ७. कौलाचारी आदि।

विविध

संख्या में कम होने पर भी सौर और गाणपत्य सम्प्रदाय के लोग भारत में विद्यमान हैं। बौद्ध, जैन, सिख आदि भी भारत के विशिष्ट उपासक हैं। इन लोगों के अलावा भी भारत में अन्य अनेक सम्प्रदाय और उप सम्प्रदाय के लोग रहते हैं। जैसे—

१. निरंजनी साधु २. मानभाव ३. किशोरी भजन ४. कुलीगायन ५. टहलिया ६. दसमार्गी ७. ज्योग्नि और शांखी ८. नरेश पन्थी ९. पांगुल १०. केउड़ दास ११. फकीर सम्प्रदाय १२. कुंडुपातिया १३. खोजा आदि।

इन असंख्य साधु और सम्प्रदायों के अलावा शंकराचार्य प्रवर्त्तित दसनामी संन्यासी (गिरि, पुरी, भारती, सरस्वती, अरण्य, वन, पर्वत, सागर, तीर्थ, आश्रम) नागा सम्प्रदाय, नानकपंथी, उदासी, वैरागी और गुरु गोविन्द प्रवर्तित निर्मली सिख, शिक्षित तथा प्रतापशाली हैं जो कुंभ मेला में स्नान के अधिकारी हैं। साधुओं का जो इतना जमावड़ा है, इनमें देश, जाति, समाज के प्रति कर्त्तव्य के दायित्व की भावना जागृत करना, क्या उचित नहीं है? इस जमावड़े को संगठित कर राष्ट्रीय निर्माण तथा जातीय उत्थान के लिए युगोचित कार्य में नियोग करना क्या उचित नहीं होगा? लेकिन हो कहां रहा है?

ऋषि का पुनर्भ्युदय और धर्म संस्थापन

सभी प्रकार के सद् अनुष्ठानों को कालक्रम से एक दुर्भेद यांत्रिकता का सैलाब आकर उसे आच्छादित करता है और उसकी जीवनी-शक्ति को पंगु बना डालता है, फलत: उसकी सार्थकता नष्ट हो जाती है। कुंभ मेला में आगत साधु-सम्मेलन में भी इस नियम का व्यतिक्रम नहीं हुआ है। इसी वजह से इस महासम्मेलन के ऊपर अपने प्रभाव का विस्तार कर इसके महान उद्देश्य को सर्वांग रूप में सफल होने नहीं दे रहा है।

व्यक्तिगत साधना में चाहे जितनी चेष्टा और निष्ठा क्यों न रहे, अगर समष्टि की साधना से उसका योगसूत्र अलग-थलग हो जाता है तो जिस प्रकार समष्टि-जीवन कमजोर हो जाता है, उसी प्रकार वह समष्टि की दुर्बलता के तरंगाघात से विशेष व्यष्टि भी कमजोर हो जाता है। भारत व्यष्टि और समष्टि जीवन का सामंजस्य खो चुका है, इसीलिए आज भारत की इतनी दुर्दशा है, इसीलिए इसके धार्मिक-जीवन की अवनति हो रही है, इसके सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन हीन होकर दुर्दशाग्रस्त हो गया है।

असाधारण तपः शक्ति सम्पन्न, सत्यद्रष्टा सिद्ध महापुरुष गण प्रत्येक युग में आविर्भूत होकर गतानुगतिता की बेड़ियां अपनी फूत्कार से उड़ा देते हैं और समाज तथा राष्ट्र के जीवन में प्रवल जीवनी-शक्ति उद्दाम ढंग से प्रवाहित कर देते हैं। यही सत्यद्रष्टा भगवत् प्रेरित महापुरुषों की अलौकिक-शक्ति के स्रोत को अनेक शताब्दियों के कलुष एवं पंकिलता को धो-पोंछकर साफ करते हुए शुद्ध, बुद्ध, शक्तिमान, वीर्यवान बना देते हैं।

लाखों संन्यासी आज भारत के वक्षःस्थल पर सगर्व विचरण कर रहे हैं। तीर्थ-मंदिर, देव-विग्रह, पूजा-बलि, होम-शास्त्र व्याख्या की कमी नहीं है। लाखों नर-नारियां अशेष क्लेश सह्य करते हुए प्राणों की बाजी लगाकर तीर्थ-दर्शन करने जाते हैं, साधु-महात्माओं का सत्संग करते हैं, फिर भी भारतीय धर्म में इतनी ग्लानि क्यों है? समाज में इतनी उच्छृंखलता और व्यभिचार क्यों है? यहां के लोग क्यों इतने डरपोक, दुर्वल और कापुरुष हैं? सत्य के प्रति उनकी दृष्टि नहीं है। आयोजन और उपकरणों के दवाव ने राष्ट्रीय सत्य को आच्छादित कर रखा है।

कहां हैं वह नीलकंठ, जिन्होंने इस अत्याचार, अनाचार, कदाचार, व्यभिचार की गरल को अपने कण्ठ में धारण करने के बाद इस देश और जनता महामृत्यु के मुँह में जाने से बचाया था? कहां है वह अलौकिक तपः शक्ति सम्पन्न भगवत पुरुष जो आज मुमूर्षु जाति के सिरहाने खड़े होकर नवजीवन की वाणी सुनायेंगे? वही पुरुषोत्तम पुराण

पुरुष प्रत्येक युग में आकर जिस प्रकार धर्म की ग्लानि और अधर्म के अभ्युदय का नाश कर धर्म राज्य स्थापित किया था, ठीक उसी प्रकार पुनः इस बार किस शरीर में उदित होकर पुनः इस जाति को सत्य का मार्ग दिखायेंगे? लक्ष्यभ्रष्ट, आदर्शच्युत जाति और समाज को सनातन वैदिक आदर्श में समाज्जित कर सनातन वर्णाश्रम धर्म में प्रतिष्ठित करेंगे। किसकी तपस्या के सिद्धपीठ के नीचे भारत के कोटि-कोटि गृहस्थ आदर्श गृहस्थ जीवन की शिक्षा प्राप्त करेंगे? लाखों संन्यासी सर्वस्व त्याग के उच्चतम आदर्श और प्रेरणा में दीक्षित होकर भविष्य के महाभारत का निर्माण करेंगे?

"भारत सेवाश्रम संघ" के प्रतिष्ठाता और परिचालक के रूप में आविर्भूत अलौकिक तपः शक्तिशाली ऋषि शरीरधारी श्रीमत् आचार्य स्वामी प्रणवानन्द आज भारत के नेता, पाता और परित्राता हैं। अब भारत तथा संसार की धर्मग्लानि और अधर्म के उत्थान को विनष्ट करने के पश्चात् धर्म-राज्य स्थापित करने का अभियान चलेगा। एक दिन इस योजना को मूर्त रूप देने की शुरूआत इस विराट कुंभमेला से हुई थी।

कुम्भ में श्रीमत् आचार्य देव की उपस्थिति

सन् १९२७ ई० की बात है। उन दिनों हरिद्वार में कुंभ मेला था। हरिद्वार स्टेशन से ब्रह्मकुण्ड की ओर जाने वाले मार्ग में जटाभाई का मंदिर है। वहीं श्रीमत् आचार्य देव का सिद्धासन स्थापित था। संघ के अनेक संन्यासी, ब्रह्मचारी और सेवक वृन्द इसी मंदिर में रहते थे। मंदिर के प्रांगण में स्थित वृक्ष के नीचे एक वेदी पर श्रीमत् आचार्यदेव का सिंहासन स्थापित था। आसन के सामने दिन-रात कीर्तन, स्तवपाठ, पूजार्च्चना, आरती आदि होते रहे। हजारों लोग भक्ति-विस्मय से विह्वल होकर 'जय गुरु ॐकार', 'जय शिव ॐकार' की ध्वनि से वातावरण को गूंजित कर रहे थे। बंगाली, पंजाबी, हिन्दुस्तानी, मद्रासी, मराठी, गुजराती, काश्मीरी आदि सभी प्रदेश के लोग भाव विभोर होकर सहयोग दे रहे थे। सुदूर भविष्य में धर्मराज के स्वागत-गीत स्वरूप 'संघं शरणां गच्छामि। धर्मं शरणं गच्छामि। हर हर बम बम' सहस्रों कंठों से प्रकट होकर अगणित लोगों के प्राणों में विस्मय मधुर दिव्य स्मृति का आवेग भर देता है।

कल्पना की आंखों से अतीत के दृश्यों को देखने का प्रयत्न कीजिए—मंदिर के प्रांगण में, वृक्ष के नीचे, उच्च वेदी पर स्थापित सिद्धासन पर उपविष्ट, समाधि गंभीर तपोधनमूर्ति, तेजपुंज कलेवर, ऋषिमूर्ति, श्रीमत् आचार्यदव पुष्प माल्य—चन्दन चर्चितांग हैं। सामने पूजारति निरत भावस्फुरित कलेवर सन्यासी और ब्रह्मचारी वृन्द, पीछे कृतांजलिपुट, दण्डायमान सहस्रों धर्मप्राण, भक्त नर-नारी भारत के विभिन्न देशों

से आये हुए उपस्थित हैं। मृदंग, करताल, झांझ, घंटा आदि वाद्य यंत्र बज रहे हैं। भीम निनाद की तरह "जय गुरु ॐकार, जय शिव ॐकार" जय-जयकार हो रहा है। ऐसा दृश्य, यह भाव, ऐसा आनन्द तरंग, इस महाशक्ति के अगाध गांभीर्य को देखकर ऐसा कौन पाषाण हृदयवाला है जो आत्महारा न हो जाय। इस महाभाव तरंग का आस्वादन प्राप्त करने के लिए दिन-रात आकुल नर-नारियों का समूह श्रीमत् आचार्य देव का दर्शन, स्पर्शन और आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए आते रहे। यह देव मानव अक्लान्त भाव से अहर्निशी अधिकांश समय सिंहासन पर बैठे समागत सहस्रों नर-नारियों पर कृपा करते रहे। अविरत गति से अजस्र लोगों के आगमन के कारण श्रीमत् आचार्य देव की तबीयत थक गयी। अन्तिम स्नान के कई दिन पहले वे काशी वापस चले गये। चलते समय उन्होंने संघ के संन्यासी तथा ब्रह्मचारियों से कह आये थे,—दिन जितना गुजरता जा रहा है, उतना ही उसकी परिपूर्णता देखकर आनन्द से मन-प्राण प्रसन्न हो रहा है। संघ के संन्यासी और ब्रह्मचारियों से उन्होंने गंभीर रूप से कहा था—"समग्र भारत तथा समग्र जगत में जिस विराट धर्मराज्य की स्थापना भारत सेवाश्रम संघ के नेतृत्व में होगी, इस बार उसके बारे में ढिढोर पीट दिया गया। जो लोग भविष्यदर्शी हैं, केवल वही समझ पायेंगे कि इस बार कुम्भ में क्या हो गया।"

इस घटना के बारह वर्ष बाद सन् १९३८ में हरिद्वार के पूर्ण कुंभ में संघ की बहुबर्धित शक्ति और योजनाएं लेकर वहां प्रचण्ड आन्दोलन किया गया। श्री श्री आचार्यदेव २१ चैत्र (फसली) से ३ वैशाख तक रोरी द्वीप स्थित शिविर में, नित्य सबेरे-शाम ९-१० घण्टे तक अपने आसन पर बैठे सहस्रों धर्मार्थी नर-नारियों को दर्शन, साधन और उपदेश देते रहे। सेवा कार्यों के अलावा नित्य पूजारती, भजन-कीर्तन, प्रवचन, हिन्दू-धर्म सम्मेलन और साधु-सम्मेलन में अध्यात्म चर्चा ने मेला प्रबन्धकों में हलचल मचा दी। इन्हीं दिनों सहसा रोरी द्वीप में भयानक अग्निकांड हुआ। विशाल बाजार, कनखल तथा भीमगोड़ा स्थित यात्री निवास एक मील तक जलकर राख हो गया। लाखों रुपयों का नुकसान हुआ, लाखों यात्री आश्रय-हीन हो गये। पड़ोस में स्थित प्रदर्शनी कैम्प भी जल गया। आश्चर्य की बात यह हुई कि इस अग्नि समुद्र में द्वीप की तरह संघ के शिविर को आंच तक नहीं लगी। एक चिनगारी तक कहीं से नहीं आयी। यह दृश्य देखकर मेला के लाखों यात्री चकित रह गये। इस आश्चर्यजनक घटना की चर्चा लोगों की जबान पर चलती रही। सचमुच यह विस्मय जनक घटना थी।

हरिद्वार की भांति प्रयाग के कुंभ में भी परमाराध्य आचार्य देव की शुभ उपस्थिति भक्तों और सामान्य जन में उद्दीपना संचार करती रही। सन् १९२४ में प्रयाग के

अर्द्धकुंभ में जाकर उन्होंने संन्यास लिया था। सन् १९३० ई० के पूर्ण कुंभ के अवसर पर संघ की ओर से पहले पहल सेवाकार्य प्रारंभ किया गया था। इस कुंभ के अवसर पर वे अस्वस्थ होने के कारण सशरीर उपस्थित नहीं हो सके थे। इसके बाद सन् १९३६ ई० के अर्द्धकुंभ में १३ जनवरी से लेकर २५ जनवरी तक उपस्थित थे। इस अवसर पर जन-जन में शक्ति और आशीर्वाद देते रहे। वे चाहते थे कि कुंभमेला नये ढंग से हो, इस मेले के द्वारा भारतीय जनता धर्म के माध्यम से राष्ट्रीय-चेतना जागृत किया जाय। भारत के अगणित साधुओं में इसका संकल्प और चेतना उद्बुद्ध कर उन्हें संगठित किया जाय। यही वजह है कि आचार्य देव वित्तवान, प्रभावशाली पण्डे, पुरोहित, महन्त, मण्डलेश्वर, मठधारी गुरुओं को बार-बार आह्वान करते रहे ताकि वे अपनी तपः शक्ति और संचित ऐश्वर्य लेकर जनता के पीछे खड़े हो जायं। उनका उदात्त आमंत्रण था—"भारत का राष्ट्रीय जीवन इन दिनों क्लेशमय विप्लव-युग से संघर्ष कर रहा है, राष्ट्र की आत्मा चाहती है कि भारत के अगणित साधु राष्ट्रीय उन्नति तथा अभ्युदय के उद्देश्य से उन्हें यथाशक्ति सहायता दें। राष्ट्र को नैतिक और आध्यात्मिक जीवनीशक्ति देकर उसमें नव संचार करें।" आचार्यजी के उत्तरसूरी गण संघ के माध्यम से साधु-समाज के निकट उसी हार्दिक आवेदन को लेकर उपस्थित हुए हैं।

आचार्य का संन्यासी-संघ-संगठन

बार-बार कहता आया, पुनः कहूंगा। उदात्त कंठ से शत बार पुनरुक्ति करूंगा—भारत धर्मप्राण देश है, धर्म ही भारत की जीवनीशक्ति है और जगत्गुरु भारत के संन्यासी उसी धर्म-सम्पद के न्यास के रूप में उसका संरक्षण और पोषण का साधन करते आ रहे हैं। आज भी इस जीवनीशक्ति को प्राप्त करने के लिए लाखों नर-नारी आकुल भाव से साधु-संन्यासियों के चरणों में आ रहे हैं। भारत का इतना पतन कभी किसी जमाने में नहीं हुआ था जैसा कि आजकल हो रहा है। इसके पूर्ण प्राणशक्ति की इतनी कमी भारतीयों ने कभी महसूस नहीं की थी, जैसा इन दिनों कर रहे हैं। यही वजह है कि अपने इस तनाव को दूर करने के लिए वे पागलों की तरह दौड़ रहे हैं—संन्यासियों के चरणों के समीप। भारत के लिए यह एक प्रकार से जीवन-मरण की समस्या है और इस समस्या का हल है—आज के भारतीय संन्यासियों के पास।

भारत के संन्यासी गण! आप इसे अनुभव करें। आपके सामने आपके लिए कितनी बड़ी जिम्मेदारी है। तुम राष्ट्र के सिरमौर हो, अपनी कठोर तपस्या के जरिये तुमने जिस अमृत आस्वादन प्राप्त किया, सत्य की खोज की है, जिस अमृत को वितरण कर युग-युग

से इस समाज और जाति को बचा रखा है, जिस अमृत को पीकर अमर भारत सहस्र-सहस्र वर्षों के झंझावातों को सीना तानकर सह्य करता आया है, आज भी पृथ्वी पर अपने अस्तित्व को बनाये रखने में समर्थ हुआ है, आओ, आज उसी अमृत को देकर भारतीय जाति और समाज में नव चेतना, नयी जागृति उत्पन्न कर उसके प्राणों में स्पन्दन उत्पन्न कर दें।

मनुष्यत्व का सर्वोच्च आदर्श तुम हो। मानव साधना का परिपूर्ण विग्रह तुम हो। प्रत्येक युग में त्याग, संयम, सत्य, ब्रह्मचर्य के महान् सनातन आदर्श को, इस समाज और जाति के सम्मुख ज्वलन्त रूप में स्थापना किया है, विश्व मानव को अमृतत्व के मार्ग पर, महामुक्ति के लक्ष्य की ओर बढ़ाया है। आओ, अपनी पूर्ण महिमा और दिव्य तेज से उद्भासित होकर आओ और इस उच्छृंखल समाज को संयम के सूत्र में बाँध दो। लक्ष्यभ्रष्ट, आदर्श-हीन, उद्देश्य-हीन नर-नारी को साधना के सुनिर्दिष्ट पथ की ओर अग्रसर करें। किसी पार्थिव प्रयोजन-परम्परा के सहारे भारतीय जाति-समाज का निर्माण नहीं हुआ है। किसी दिग्विजयी राजा के इशारे पर अथवा किसी महावीर के हुंकार से या किसी प्रतिभाशाली मस्तिष्क की शक्ति के प्रभाव से भारतीय समाज या जाति कभी भी शासित या परिचालित नहीं हुई है और न होगी। अगर ऐसी धारणा किसी को है तो यह निश्चित है कि उन्हें भारत के बारे में ज्ञान नहीं है। ऐसे लोग भारत की आत्मा को समझ नहीं सके हैं। भारत का भाव, भारत का आदर्श उनकी दृष्टि पकड़ नहीं सकी है। भारत का भूत, भविष्य-चिन्ता उनके चित्त में प्रकट नहीं हो सका है।

सर्वत्यागी विश्व-हित को लक्ष्य बनानेवाले आर्य ऋषि कुल अपने कठोर तपस्या के प्रभाव से जिस सत्य को प्राप्त कर चुके हैं, उसी सत्य को केन्द्र बनाकर भारतीय समाज की सृष्टि हुई है। जिस महान् त्याग के आदर्श से अनुप्राणित होकर, ऋषि गण सत्य को प्राप्त कर कृतार्थ हुए थे, उसी त्याग के आदर्श से गठित, सुश्रृंखलित, सुरक्षित और परिचालित हैं—भारतीय समाज और हमारा वर्णाश्रम धर्म। लिहाजा अगर कोई अर्वाचीन यह आशा करें कि वे अपनी अपरिणत, पर मतरोमंथन पटु मस्तिष्क में उत्पन्न भाव कल्पनानुयायी नष्ट करके समाज का नये ढंग से निर्माण करेंगे तो यह उनकी बुद्धि का दिवालियापन है। हमारे यहां के कई शताब्दियों का इतिहास अध्ययन करने से ही इसका पता चल जायगा। राजा राममोहन राय से लेकर आज तक न जाने कितने समाज-सुधारक भारत के वक्षस्थल पर सामाजिक आन्दोलन कर चुके हैं और करते आ रहे हैं, लेकिन समाज-सुधार, संगठन या अनुशासन विधान दूर की बात है, समाज बन्धन क्रमशः शिथिल हो जाने के कारण उच्छृंखलता, उन्मार्गगामिता,

स्वेच्छाचारिता, व्यभिचार, अनाचार द्रुतगति से बढ़ रहे हैं। परमहंसदेव के कथनानुसार : "चपरास विहीन" नेताओं के अनाधिकार चर्चा करने के कारण समाज की दुर्दशा बढ़ती जा रही है।

भारत के संन्यासी, प्रत्येक युग में तुम अपनी तपः शक्ति और आध्यात्मिक प्रभाव से लोगों को संचालित करते आ रहे हो, आज के इस दुर्दिन में यह जाति तुम्हारी ओर देखती हुई बड़े भरोसे के साथ दिन गुजार रही है। आओ संन्यासियों, पुनः तुम अपनी साधना, अलौकिक शक्ति के जरिये अपने दायित्व का निर्वाह करो। तुम इस जाति के अभिभावक थे, तुम्हारी उपेक्षा या लापरवाही के कारण राष्ट्र तथा समाज का अधःपतन हो गया हो—इसे मत भूलो।

भारत के राष्ट्रीय विजय-अभियान का नेतृत्व संन्यासी ही करते आ रहे हैं। बुद्ध, शंकराचार्य, रामानुज, चैतन्य, नानक इत्यादि महापुरुषों द्वारा प्रवर्तित विराट कार्यों का अध्ययन करने पर इसके प्रमाण मिल जायेंगे। आज के भारत को अपने उत्थान के लिए ऐसे ही महापुरुषों की आवश्यकता है जो सर्वत्यागी, विश्व हितैषी, संन्यासी संघ हो, जो अपने जीवन में सत्य के आदर्शों को प्राप्त कर चुके हैं जिनकी शक्ति चिनगारी की तरह भारत के एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त तक दौड़ जाय, जो जीवन को पूर्ण कर मृत्यु की उपेक्षा करता चले।

"भारत सेवाश्रम संघ" का इसी प्रकार के सर्वत्यागी, विश्व कल्याण के लक्ष्य को लेकर—"आत्मनोमोक्षार्थं जगद्धिताय च" उत्कृष्ट जीवन संन्यासी, नवभारत के विधिनिर्दिष्ट परित्राता आचार्य श्रीमत स्वामी प्रणवानन्द जी ने स्वयं निर्माण किया है। उन्हीं के द्वारा शिक्षित और संचालित हुआ है। इस आदर्श के प्रति जो लोग उन्मुख हैं, उनके लिए संघ का द्वार सदा उन्मुक्त है। कुंभ मेला में समवेत लाखों संन्यासियों के समक्ष यह नवगठित 'संन्यासी संघ' संन्यास का ज्वलन्त आदर्श के रूप में उपस्थित है।

विश्व प्रसिद्ध भारत सेवाश्रम संघ संन्यास के उसी आदर्श को दिखाना चाहता है ताकि लोग नियमित रूप से साधन-भजन और ध्यान के साथ ही लोक कल्याण के लिए व्रत लेकर आत्मोत्सर्ग करेंगे। उन्हें कम-से-कम नित्य छः घण्टे आत्मोन्नति के लिए अनुशीलन करना होगा, निरामिष भोजी होना पड़ेगा, भोग-विलास हीन जीवन-यापन करना होगा, ब्रह्मचर्यनिष्ठ और इन्द्रियसंयमी होना पड़ेगा, संन्यास के सभी नियमों का पालन करना पड़ेगा। ऐसे लोगों की कर्त्तव्यनिष्ठा से समग्र भारत में आश्रम मठ की स्थापना होगी जहां नैतिक, धार्मिक और आध्यात्मिक वातावरण की सृष्टि होगी। इस आदर्श के सहारे शिक्षायतन की स्थापना होगी, धार्मिक तथा नैतिक चेतना-हीन लोगों

स्वार्थवासना दुष्ट हृदय अचानक एक दिव्य भाव की प्रेरणा से, किसी एक अपार्थिव स्मृति के स्पर्श से आत्महारा हो जायगा। तुम अनन्त आनन्द लोक में विचरण करते रहोगे। भारत केवल भारतीयों का ही नहीं है, समस्त विश्व, विश्व के मानवों का है। भारत का आदर्श केवल भारत का ही नहीं है, बल्कि विश्व मानव का साध्य वस्तु है। भारत का धर्म, भारत का दर्शन, न केवल भारत का है, अपितु समग्र मानव-जाति की विभिन्न समस्याओं का चरम समाधान है।

भारत के तीर्थ समूह

१. मानव हृदय के महाभावोद्दीपक प्राकृतिक वैचित्र्य और सौन्दर्य का लीला निकेतन है।

२. देवर्षि, महर्षि, राजर्षि, सिद्ध महापुरुष और भागवत प्रेमोन्मत्त महामानवों की साधना का स्थान है। तप का अक्षय केन्द्र और अमर लीला स्थल है।

३. राष्ट्र का हृदय, समाज का आदेश केन्द्र, शक्ति का सनातन उत्स है। शिक्षा-सभ्यता की जन्मभूमि है।

४. शैशव का दिव्य महाभावमय, स्वप्न कल्पना, कर्मजीवन की शान्ति का स्थान है। वार्द्धक्य का आश्वास और आश्रय है और मृत्यु के उस पार का प्रकाशदाता तथा पथ प्रदर्शक है।

५. देवताओं का माहात्म्य और करुणा घनीभूत होकर यहाँ मानव त्राण के लिए आविर्भूत हुए हैं, इसीलिए 'तीर्थ' नाम उच्चारण करते ही नर-नारी का हृदय, एक अनिर्वचनीय विस्मय रस से परिपूरित आनन्द के आवेश में अबस हो जाता है। चाहे वह पाश्चात्य विद्याभिमानी हो या विदेशी आदर्श से ओतप्रोत। इन तीर्थस्थानों में जो व्यक्ति व्रत रखकर एकाग्रचित्त से तीन रात गुजार देते हैं, देवता की पूजा, जप, प्रार्थना करते हैं, वे निश्चित रूप से अतीन्द्रिय भाव के स्पर्श उन्नत तथा शान्ति के अधिकारी हो जाते हैं। देवगण भी तीर्थ के माहात्म्य को देखकर कृतार्थ होंगे।

तीर्थों का कलूष

काल के प्रभाव से सभी में परिवर्तन होते हैं। काल के प्रभाव से पुण्यभूमि भारत के तीर्थों का पहले की भाँति अब वैसा तपः प्रभाव और पवित्रता नहीं है। विभिन्न कारणों से असंख्य पाप-ताप-व्यभिचारों ने प्रवेश ले लिया जिससे तीर्थस्थानों की महिमा म्लान हो गयी है। जिन तीर्थस्थानों में लोग शांति और पवित्रता की लालसा से व्यग्र होकर जाते हैं आज उसके बदले तीव्र वितृष्णा और अश्रद्धा लेकर लौटते हैं। आखिर क्यों?

कहा गया है—"तीर्थी कुर्व्वन्ति साधवः"—साधक की तपस्या शक्ति से तीर्थस्थानों का माहात्म्य बढ़ता है। सदियों से भारत के धर्मक्षेत्र में ऐसे किसी आध्यात्मिक शक्ति सम्पन्न, धर्म संस्थापक महापुरुष का आविर्भाव न होने के कारण ही तीर्थस्थानों की यह दुर्दशा हुई है। आदर्शभ्रष्ट जाति अवाध रूप से अनाचार, कदाचार, व्यभिचार कर तीर्थों को कलुष बनाते आये हैं।

संघ द्वारा तीर्थ-संस्कार कार्य

जब धर्म की ग्लानि और अधर्म का प्रादुर्भाव होता है तब प्रत्येक युग में जो आते रहते हैं—मानव शरीर धारण कर वही भारत के भगवान आज पुनः भारत के धर्म संस्थापक जगद्गुरु आचार्य श्रीमत् स्वामी प्रणवानन्द जी के रूप में अवतीर्ण हुए हैं। धर्म की ग्लानि और अधर्म का नाश करने के लिए वे "भारत सेवाश्रम संघ" नामक महाशक्तिशाली संघ की स्थापना कर चुके हैं।

उनकी अमोघ तपः शक्ति से शक्तिमान उनकी शक्तिमयी वज्रवाणी से अनुप्राणित संघ के साधकवृन्द भारत के तमाम तीर्थस्थानों में जाकर धर्म की अमृतवाणी का प्रचार कर रहे हैं। तीर्थों के अनाचार, कदाचार, व्यभिचार, उत्पीड़न आदि को दूर कर तीर्थयात्रियों का तीर्थ-कार्य संपूर्ण करने में सहायता कर रहे हैं। उनमें धार्मिक-भावना उत्पन्न कर रहे हैं। प्रधान-प्रधान तीर्थस्थानों में केन्द्र की स्थापन कर विराट आन्दोलन प्रारंभ किया गया है। आजकल जो लोग गया, काशी, कुरुक्षेत्र, पुरी, हरिद्वार, प्रयाग, वृन्दावन, नवद्वीप, गंगासागर आदि तीर्थस्थानों में गये हैं या जा रहे हैं, उन लोगों ने भारत सेवाश्रम संघ के विराट कर्मशक्ति का फल प्रत्यक्ष रूप से देखा होगा। प्रत्येक जगह यात्री निवास, मंदिर, दातव्य चिकित्सालय, स्कूल, लाइब्रेरी, छात्रावास आदि स्थापित हैं। सामान्य व्यय से स्वस्थ, निरापद परिवेश में तीर्थयात्रियों के तीर्थकृत्य संपादन कराये जाते हैं। इसके साथ ही उनमें विभिन्न तरीकों से धार्मिक और आध्यात्मिक भावों का संचार करने का प्रयत्न किया जाता है।

एक कुंभ में त्रितीर्थों का समावेश

अब पुनः कुंभयोग की चर्चा करना चाहूँगा। कुंभ स्नान का इतना माहात्म्य क्यों है, इसे बताया जा चुका है। कुंभयोग और भारतीयों स्वतः स्फूर्त उत्साह, धर्मप्राणाता, कुंभ योग की पौराणिक पृष्ठभूमि, कुंभ मेला का इतिहास, कुंभ का काल निर्णय, चारों तीर्थों के कुंभों का विवरण, कुंभ में साधु-संन्यासियों की भूमिका, कुंभ मेला में भारत सेवाश्रम संघ के सेवाकार्य और संघ प्रतिष्ठाता की उपस्थिति तथा संन्यासी-सम्प्रदाय के पुनर्गठन

का प्रयत्न, तीर्थ माहात्म्य और तीर्थ-संस्कार, आगामी कार्यक्रम आदि के बारे में सम्यक चर्चा किया गया है। कुंभ की तरह इतना बड़ा धार्मिक मेला पृथ्वी के किसी हिस्से में नहीं होता। कुंभ का क्या माहात्म्य है, इसे विशेष दृष्टि से विचार करना उचित है।

तीर्थों का आभिधानिक अर्थ है—जलावतरणिका। अर्थात् स्नान वाले घाट को ही तीर्थ कहते हैं। स्नान करना तीर्थ को एक अपरिहार्य कृत्य है। लेकिन किसी नदी विशेष, कुंड विशेष या वाणी विशेष में स्नान करना ही तीर्थाचरण की आखिरी बात नहीं है। शास्त्रों में त्रिविध तीर्थों का वर्णन है। जैसे स्थावर तीर्थ (या भौमतीर्थ), जंगम तीर्थ और मानस तीर्थ। जहां भूमि का अत्यद्भुत प्रभाव है, पानी में तेजः है और प्राचीनकाल से जहां ऋषि-मुनि और साधु-संन्यासी तपस्या करते रहे, ऐसे स्थान को स्थावर तीर्थ या भौमतीर्थ कहा जाता है। अध्यात्म शक्ति सम्पन्न तथा ब्रह्मनिष्ठ महात्मा ही जंगमतीर्थ हैं। वे लोग चलन्त, जीवन्त शरीर से वर्तमान में रहते हुए अपनी शक्ति के माध्यम से जो आशीर्वाद देते हैं तथा जितने आत्म कल्याणकारक और अध्यात्ममूलक उपदेश देते हैं, उसमें अवगाहन करने से मनुष्य का मलिन चित्त शुद्ध हो जाता है। इस भूमि पर साधक की मानस-सत्ता का दिव्य भाव और महत्-चेतना का जो उन्मेष होता है, वही मानस तीर्थ है। सत्य, क्षमा, दया, दम, दान, इन्द्रिय निग्रह, सरलता, संतोष, ब्रह्मचर्य, प्रियवादिता, ज्ञान, धैर्य, पुण्य, मन शुद्धि को, शास्त्रों ने मानस तीर्थ कहा है।

ब्राह्मणां जंगमं तीर्थं निर्म्मलं सार्व्वकामित्वम्।
येषां वाक्योदकेनैव शुध्यन्ति मलिना जनाः।।
सत्यं तीर्थं क्षमा तीर्थं तीर्थमिन्द्रियनिग्रहः।
सर्वभूतदया तीर्थं सर्व्वत्रार्ज्जवमेव च।।
दानं तीर्थं दमस्तीर्थं संतोषस्तीर्थमुच्यते।
ब्रह्मचर्यं परं तीर्थं तीर्थंच प्रियवादिता।।
ज्ञानं तीर्थं धृतिस्तीर्थं पुण्यं तीर्थमुदाहृतम।
तीर्थानामापि तत् तीर्थं विशुद्धिर्मनसः परा।।
एतत् ते कथितं देवी मानसं तीर्थ लक्षणम्।
प्रभावाद्दभुताद्भूमेः सलिलस्य च तेजसा।।
परिग्रहान्मुनीनांच तीर्थाणां पुण्यता मता।
तस्माद्भोमेषु तीर्थेषु मानसेषु च नित्यशः।।
उभयेर्स्वापि यः स्नाति याति परमां गतिम।

तीर्थ स्नान की पूर्णांग सफलता वहीं है जहां इन तीर्थों का समावेश है। क्योंकि त्रिविध स्नान का माहात्म्य ही मनुष्य के भीतर आत्मीक चेतना जागृत करता है। यहां दृढ़तापूर्वक कहूंगा—कुंभ मेला ही वह स्थान है जहां इन त्रितीर्थों का समाहार होता है। हरिद्वार, प्रयाग, नासिक, उज्जयिनी—इन चारों स्थानों की भूमि में अत्यद्भुत गुणसत्ता है। इन स्थानों में आवाहमान काल से ही ऋषि-मुनि और साधु-संन्यासी साधना करते रहे। इन चारों तीर्थों में प्रवाहिता गंगा, यमुना, सरस्वती, गोदावरी और शिप्रा पुण्यतोया के रूप में वन्दिता और परिसेविता हैं। भौमतीर्थ के सभी लक्षण इन चारों स्थानों में दृश्यमान हैं। इस कुंभयोग में सहस्रों संन्यासी, योगी, भक्त, तपस्वी, ज्ञानी, महात्मा आते हैं, लाखों गृहस्थों को दर्शन, आशीर्वाद और उपदेश देते हैं। कुंभ स्नान के आग्रह और आवेग के स्वर्णसूत्र से धर्मार्थियों का अन्तःकरण सर्वतोअभावेन शुद्ध हो जाता है। मन एकाग्र, स्थिर, अन्तर्मुखी होता है। कम-से-कम सामयिक रूप से ही सही; सत्य, ज्ञान, दम, दानादि मानसिक सद्प्रवृत्तियों का जागरण होता है। इससे यह स्पष्ट है कि तीर्थ स्नान की तीन विशिष्ट धाराएं कुंभ यात्रियों के निकट उन्मुक्त हैं। इस प्रकार के सर्व्वात्मक सुयोग अन्यत्र नहीं मिलते। पश्चिमी बंगाल के गंगासागर के मेले में तथा दक्षिण भारत के गोदावरी-पुष्करम् और कृष्णापुष्करम् मेला में अगणित साधु-महात्मा एकत्रित होते हैं, पर कुंभ मेला की विशेषता सबसे अलग है। पार्थिव विषयी चिन्ता से चित्त को प्रत्याहार कर तत्त्वदर्शन की गहराई में प्रवेश करने पर कुंभ की आध्यात्मिक महिमा का अनुभव होता है। स्नान करना चाहिए—"हृदिरत्नाकर के अगाध जल में।" यही स्नान ही अध्यात्म-स्नान है। इस बात को उपसंहार में स्पष्ट किया गया है।

उपसंहार

भारत का कुंभ योग और भारत के तीर्थ लोगों में एक प्रकार की अध्यात्म अन्तश्चेतना ला देता है। यही कुंभ स्नान और तीर्थ-सेवन की अमृतमय फलश्रुति है। यदि यह आत्मचेतना जागृत न हो तो समझ लेना चाहिए कि पूजा-पाठ, योग-यज्ञ, तीर्थस्नान, देव-दर्शन सभी बेकार हैं। यह स्नान हाथी के नहाने की तरह सामयिक विलास है। इससे कोई लाभ नहीं होता।

अनादिकाल से मानव के अन्तर में अमृत प्राप्त करने की इच्छा रहती है। त्रिपापदग्ध, मायामय, मरु-संसार के चक्र में पड़कर जीव केवल दुःख-ज्वाला और पाप-ताप भोगता है, बीमारी, जरा से जीर्ण होकर श्मशान चला जाता है। पार्थिव भोग-संपदा उसे वास्तव में सुख-शांति नहीं दे सकता, बल्कि प्रतिक्रिया जनित दुःख

और अशांति उत्पन्न करता है। बार-बार मृत्यु-यंत्रणा भोगना पड़ता है। यह दुःख, यह ताप, यह अशान्ति, यह मृत्यु—क्या इससे हम मुक्ति नहीं पा सकते? अमृत कहां है? यह पहले ही बताया गया है कि अमृत के बारे में जिज्ञासा भारत के आर्यों में ही कभी उत्पन्न हुई थी। उसका कृच्छवरण है—अरण्य, कान्तार, पर्वत के गुफाओं, नदी तट और तीर्थभूमि में। उसे उत्तर मिला था और उसने उदात्त कंठ से घोषणा की थी—"वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्।" मैंने उसे बता दिया है और उन्हें बता देने पर मनुष्य हो जाता है—"अमृतस्य पुत्राः।" इसी अमृत की पिपासा में एकदा भारतीय नारी मैत्रयी वैराग्य की दीप्ति से कह उठी थीं—"येनाहं नामृतास्यां किमहं तेन कुर्य्याम।" जिसमें अमृत नहीं है, उसे लेकर क्या करूंगी? भारत पुत्र नचिकेता भी इसी अमृत के लिए जागतिक विषय सम्पदा, राज्येश्वर्य, वनिता भोग की लालच को अस्वीकार कर दिया था।

हे पुण्यार्थी, हे तीर्थचारी, हे अमृतपिपासु, डूब जाओ, अपने भीतर डूब जाओ। भौमतीर्थ में स्नान मात्र करने से कहीं अमृतत्व की साधना पूरी होती है? जंगम तीर्थ में ब्रह्मज्ञ महायोगियों से साधना और उपदेश ग्रहण करो, बाद में मानस-तीर्थ में मानस अवगाहन करो। मन को शुद्ध, शान्त, अन्तर्मुखी करना चाहिए। आत्मनिष्ठा में सचेतन होना चाहिए। कुंभ नगरी की शोभा अपरूप है। सरकार कई करोड़ रुपये इस समारोह के पीछे व्यय करती है। सजी हुई दुकानें, बाजार, चारों ओर झलमलाती हुई बिजली की रोशनी, अगणित शिविर, तम्बू, कनात, ऐश्वर्य का अपूर्व भंडार। पूर्ण यौवना रूपसी की तरह कुंभ नगरी का श्रृंगार होता है। कुंभ नगरी का यह रूप देखकर लक्ष्यच्युत नहीं होना चाहिए। भगवान का मोहनी रूप देखकर असुर मुग्ध हो गये और उन्हें अमृत प्राप्त नहीं हुआ। राहू का सिर कट गया था। अतएव आप अपनी निष्ठा बनाये रखें।

कुंभ स्नान के माहात्म्य को क्या आप सफल करना चाहते हैं? क्या आप सचमुच अमृत कुंभ की तलाश में हैं? क्या अमृत पान की पिपासा आपके मानस में है? तब तो नये ढंग से क्षीर सागर आपको मन्थन करना पड़ेगा। अमृत का तात्पर्य है—आत्मनिष्ठा के प्रकाश में अनुध्येय। कुर्म, नागराज और मन्दर पर्वत की पौराणिक कहानियां अध्ययन करें। सुरासुर संग्राम भी साधन-संकेत के परिवाहक हैं। क्या आप नहीं जानते कि आप कौन हैं? तुम तो अमृत के संतान हो—तुम जीव नहीं शिव हो। तुम आत्मा हो, तुम ब्रह्म हो, तुम स्वयं ही अमृत कुंभ हो—इसका अनुभव स्वयं करो।

दुरन्त काम मन को मथता है। इसीलिए कन्दर्प का एक नाम है—मन्मथ। काम के तीव्र मन्थन से चित्त में हलाहल बनता है; इससे दुःख, शोक, जरा, व्याधि और मृत्यु आती है। इस मार्ग पर मत जाओ। आत्मनिष्ठा में व्याकुल हो जाओ। तुम्हारे भीतर जो हैं, वे अजर, अमर अशोक, अभय अमृत है जो आत्मा ध्यान निर्मन्हन में हैं, उन्हें

आविष्कार करने का प्रयत्न करो। क्षीरसागर मन्थन के समय चित्त को गहरे में डुबोना पड़ता है। कुर्म जैसे बाहर से भीतर अपने को खींच ले जाता है, साधक को भी उसी प्रकार बाहरी इन्द्रिय समूह को विषय की ओर से हटाकर अन्तर्मुखी साधना में आत्मस्थ कर लेना चाहिए। उन्हें सर्प की तरह अनिकेत, एकचारी और योगचारी होना चाहिए। योगचर्या में मन्दर पर्वत की स्थिर अचंचल, अविचल होना चाहिए। आत्मध्यान में अपरिसीम धैर्यशील और अविकम्पित होना चाहिए। सुरासुर संग्राम जैसा। जी हां, वर्ना छुटकारा कहां? सुरासुर तुम्हारे ही भीतर हैं। दैवी सम्पदा और आसुरी सम्पदा अविराम युद्ध ही सुरासुर युद्ध है। वेदान्त भाष्यकारों की यही परिभाषा है; यही नित्यानित्य वस्तु विवेक। आत्मा ही एक मात्र नित्य वस्तु है, बाकी सभी अनित्य। अपने विवेक द्वारा अनित्य वस्तु को त्याग कर नित्य वस्तु में निष्ठा बढ़ाना चाहिए जिस प्रकार हंस दूध पी लेता है और पानी छोड़ देता है। नित्यानित्य वस्तु जब विचार द्वारा आत्म विवेक स्थायी हो जाता है तब अमृत का प्रकाश द्वार अपने आप खुल जाता है। जब अन्तर स्थित देवासुर-संग्राम में देवों की जय होती है तब विजयी अमृत कुंभ लाता है। अपने भीतर का यह अमृत मंथन यह तत्त्वानुशीलन कोई कष्टदायक नहीं है। श्वेताश्वतरोपनिषद ने इस आत्ममंथन के बारे में कहा है—

स्वदेहमरणिं कृत्वा प्रणवंचोत्तरारणिम्।
ध्याननिर्म्मथनाभ्यासाद् देवं पश्येन्निगूढ़वत्।।

दो अरणियों के संघर्ष से अग्नि की उत्पत्ति होती है। अग्नि इन अरणियों के भीतर नगूढ़ भाव में रहती है। ठीक इसी प्रकार तुम्हारे भीतर आत्मा की अग्नि छिपी हुई है—वहीं हैं ज्योतिर्मय परम पुरुष। इसी अग्नि को ध्यान निर्म्मन्हन कर आविष्कार करना पड़ता है। कल्पना कीजिए—आपका शरीर ही अधरारणि और प्रणव है—उत्तरारणि। इन दोनों को बारंबार रगड़ना प्रारंभ कीजिए। अर्थात् अन्तर्योग में परमात्मा का आत्म समर्पण की जो साधना है, अहर्निश आत्मानुशीलन की जो श्रमनिष्ठा है, परमात्मा के साथ जीवात्मा के मिलन की जो परम्परा है—वही है दो अरणियों का संघर्ष। प्रणव के चार पाद हैं। प्रथम तीन पाद में वे ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर—स्रष्टा, पालक, संहर्त्ता—यानी ईश्वर, और चतुर्थ पाद में वे तुरीय ब्रह्म हैं। ईश्वर में, इष्ट देवता में, आत्मा या ब्रह्म में जो ध्याननिष्ठा है, उसी के भीतर से आग निकलती है। यही आग अमृत की आग है। यही वही ज्योतिर्मय परम पुरुष की सनातन ज्योतिःपुंज है। इसी के प्रकाश में भगवद्दर्शन, आत्मदर्शन या ब्रह्मदर्शन होता है। शिव के ललाट से निकलने वाली तीव्र अग्नि शिखा से काम जल जाता है, मृत्यु की मौत हो जाती है। उस

वक्त तुम अमृत के अलावा और क्या हो? आत्मा के जागरण से ही अमृत का प्रकाश होता है। युगाचार्य स्वामी प्रणवानन्द के श्रीकंठ में भी यही आत्मचेतना ही ध्रुव भारती, पराशान्ति का निर्देश है–

"आत्मचिन्ता मानव के भीतर आत्मज्ञान लाकर उसे रिपुओं की उत्तेजना और इन्द्रियों के उत्पीड़न से उद्धार करके उसे महामुक्ति और अनन्त कल्याण मार्ग की ओर प्रवर्त्तित करता है। मानव मायामोह प्रयुक्त भ्रान्तिजाल में अपने को फंसाकर आत्म चिन्ता से दूर हो जाता है। मानव अगर भ्रान्त बुद्धि को नष्ट करके मायाजाल को छिन्न-भिन्न कर दे और अपने प्राण में आत्म स्मृति जगा सके तो कुछ ही दिनों के भीतर वह आत्मज्ञान प्राप्त कर शांति-सुख से अपना दिन गुजार सकता है।"

आत्मदृष्टि के सम्यक स्फुरण से कुंभ योग सार्थक हो। साधक के निज बोध से जब अमृत पुरुष की ज्योति स्वतः प्रस्फुटित हो उठती है तब कुंभयोग का माहात्म्य आधिभौतिक सीमा को पारकर अध्यात्म की सीमा को स्पर्श करता है।

परिशिष्ट

तीर्थ-परिचय

चार धाम–श्री बदरीनाथ, श्री द्वारिका, श्री जगन्नाथ और श्री रामेश्वर धाम। श्री बदरीनाथ धाम हिमालय के नर नारायण पर्वत के नीचे अलकनन्दा नदी के तट पर स्थित है। यहां से चालीस मील दूर ज्योतिर्मठ है। श्री द्वारिका धाम सौराष्ट्र के समुद्र किनारे है। यहां प्रसिद्ध शारदापीठ है। उड़ीसा के पुरी स्थित समुद्र किनारे श्री जगन्नाथ धाम और गोवर्धन मठ है। श्री रामेश्वर तमिलनाडु के समुद्र तट पर है। प्रसिद्ध श्रृंगेरी मठ इसी प्रान्त में है।

सप्तनदी–गंगा, यमुना, सरस्वती, गोदावरी, नर्मदा, सिन्धु, कावेरी। ऋग्वेद में सप्त नदियों के अलावा अन्य नाम पाये जाते हैं। उसमें गंगा, यमुना, सरस्वती के साथ शुतुद्री, परुष्णी, असिक्न, मरुवृद्धा, वितस्ता, सुषोमा, अर्जीकिया नदियों के नाम आते हैं। (ऋग्वेद १०।५७।५)

सप्तकुल पर्वत–महेन्द्र, मलय, सह्य, शुक्तिमान, ऋक्ष, विंध्य और पारियात्र। मतान्तर से हिमालय भी एक कुल पर्वत है। इसे लेकर कुल आठ पर्वत है।

सप्ततीर्थ–अयोध्या, मथुरा, माया (हरिद्वार), काशी, कांची, अवन्तिका (उज्जयिनी), द्वारावती।

चतुःसरोवर–दक्षिण में पम्पा, पूर्व में विन्दु, पश्चिम में नारायण और उत्तर में नारायण।

चतु:क्षेत्र—मुक्तिक्षेत्र, वराह क्षेत्र, हरिहर क्षेत्र और कुरुक्षेत्र।

द्वादश ज्योतिर्लिंग—(१) सौराष्ट्र में सोमनाथ (२) आंध्र के कृष्णानदी के तट पर श्री शैल पर्वत के ऊपर मल्लिकार्जुन (३) उज्जयिनी में शिप्रा नदी के किनारे महाकाल (४) मध्य प्रदेश के मांधाता पर्वत पर नर्मदा के किनारे ओंकार तीर्थ में परमेश्वर (५) हिमालय के मन्दाकिनी तट पर केदारनाथ (६) पूणे के उत्तर सह्याद्रि पर्वत पर भीमा नदी के उद्‌गमस्थल के समीप भीमशंकर, मतान्तर से कामरूप (आसाम) जिला के गुवाहाटी शहर की बगल में प्रवाहित ब्रह्मपुत्र नदी के भीतर ब्रह्मपुर पहाड़ पर स्थित शिव को ज्योतिर्लिंगों में माना जाता है। (७) काशी के गंगा तट पर विश्वेश्वर (८) नासिक (महाराष्ट्र) जिला के पंचवटी से १८ मील दूर गोदावरी तट पर त्र्यम्बक पुरी में त्र्यम्बकेश्वर (९) बिहार के वैद्यनाथ धाम में वैद्यनाथ मतान्तर से महाराष्ट्र के परलांग स्टेशन के समीप बैजनाथ भी ज्योतिर्लिंग हैं। (१०) औरंगाबाद जिले के अंवढ़ा (महाराष्ट्र) गांव में नागेश्वर दारुकवन (द्वारिका से १०-१२ मील दूर) नागेश्वर शिव को मतान्तर से ज्योतिर्लिंग कहा जाता है। (११) रामनाथ (तमिलनाडु) जिला के समुद्र तट पर सेतुबंध में रामेश्वर (१२) महाराष्ट्र के बेरुल गांव (इलोरा) घुमेश्वर। सबेरे इन द्वादश ज्योतिर्लिंगों का पुण्य नाम स्मरण करने पर सात जन्मों के पाप दूर हो जाते हैं।

५१ शक्तिपीठ—दक्ष-यज्ञ में पति-निन्दा सुनकर विधुरा सती ने अपना प्राण त्याग दिया था। सती-विरह से शिव उन्मत्त हो उठे। सती के शव को लेकर वे घूमने लगे। यह देखकर विष्णु ने चक्र के द्वारा सती के शव को खण्ड खण्ड कर डाला। सती के अंग तथा आभूषण ५१ स्थानों पर गिरे थे। जहां-जहां गिरे थे, उन स्थानों को पीठस्थान माना गया। मतान्तर भी है। तंत्र चूड़ामणि के अनुसार उक्त ५१ पीठ निम्नलिखित हैं—

(१) हिंगलाज में देवी का ब्रह्मरंध्र गिरा था। यहां शक्ति-भैरवी। (२) हवड़ा में किरीट, शक्ति-विमला। (३) वृन्दावन में केश, शक्ति-उमा (४) कोल्हापुर में त्रिनेत्र, शक्ति-महिषमर्दिनी। (५) बारिसाल में नासिका, शक्ति-सुनन्दा। कोष्ठ में शक्ति का नाम लिखते हुए अन्य पीठों का वर्णन आगे किया जा रहा है। (६) बगुड़ा में वामतल्प (अर्पणा) (७) लद्दाख में दक्षिण तल्प (श्रीसुन्दरी) (८) काशी मणिकर्णिका में कर्ण कुण्डल (विशालाक्षी) (९) राजमहेन्द्री में वामगण्ड (विश्वेश्वरी रुक्मिणी), (१०) मद्रास में दक्षिण गण्ड (कुमारी), (११) सुचिन्द्रम में ऊर्ध्व दन्तपंक्तियां (नारायणी) (१२) अधोदन्तपंक्तियां जहाँ गिरी थी (नाम अज्ञात) वहां वाराही। (१३) ज्वालामुखी में जिह्वा (अम्बिका)। (१४) उज्जयिनी में ऊर्ध्वओष्ठ (अवन्ती)। (१५) आमेदपुर में अधरोष्ठ (फुल्लरा), (१६) नासिक में चिबुक (भ्रमरी), (१७) अमर गुफा में कंठ (महामाया) (१८) सौथमा में कंठहार (नन्दिनी), (१९)

श्रीशैलमल्लिकार्जुन में ग्रीवा (महालक्ष्मी), (२०)नलहाटी में उदरनली (कालिका), (२१) जनकपुर में वामस्कन्ध (उमा), (२२)मद्रास में दक्षिण स्कन्ध (कुमारी), (२३) गिरनार के पर्वत पर उदर (चन्द्रभागा), (२४) जालंधर में वाम स्तन (त्रिपुर मालिनी), (२५) चित्रकूट में दक्षिण स्तन (शिवानी), (२६) वैद्यनाथ धाम में हृदय (जय दुर्गा), (२७) दुबराजपुर में मन (महिषमर्दिनी), (२८) कन्याकुमारी में पृष्ठ (सर्वाणी) (२९) कटोवा में वामबाहू (बहुला), (३०) बांगला देश के सीताकुण्ड में दक्षिण बाहू (भवानी), (३१)उज्जयिनी में कूर्पर (चण्डिका), (३२) पुष्कर में दोनों मणिबंध (गायत्री), (३३) मानस सरोवर में दक्षिण पाणि (दाक्षायणी), (३४) बांगला देश के जसोर जिले में वाम पाणि (यशोरेश्वरी), (३५) प्रयाग में हस्तांगुली (ललिता), (३६) पुरी में नाभि (विमला), (३७) शिवकांची में अस्थि (देवगर्भा), (३८) वाम नितम्ब जहां गिरा था (नाम अज्ञात), वहां की शक्ति काली हैं। (३९) अमरकंटक में दक्षिण नितम्व (सोनाक्षी), (४०) आसाम में योनि (कामाख्या), (४१) नेपाल में दोनों घुटना (महामाया), (४२) आसाम में बायां जंघा (जयन्ती), (४३) पटना में दक्षिण जंघा (सर्वानन्दकरी), (४४) जलपाईगुड़ी में वाम पद (भ्रामरी), (४५) त्रिपुरा में दक्षिण पद (त्रिपुर सुन्दरी), (४६) कुरुक्षेत्र में दायां गुल्फ (सावित्री), (४७)मेदिनीपुर में बायां गुल्फ (कपालिनी), (४८) लंका में नुपूर (इन्द्राक्षी), (४९)वर्धमान में दायां अंगूठा (भूतधात्री), (५१) जयपुर में बायां अंगूठा (अम्बिका) तथा (५१) कलकत्ता में देवी की शेष अंगुलियां (कालिका) गिरी थीं।

संघ के तीर्थाश्रम

पता और सूचनाएं

गया, काशी, प्रयाग, वृन्दावन, हरिद्वार, कुरुक्षेत्र, गौरीकुंड, पुरी, नवद्वीप, गंगासागर आदि तीर्थों तथा दिल्ली में संघ के आश्रमों में तीर्थयात्री ठहरते हैं और तीर्थ कृत्यों में सहायता प्राप्त करते हैं। आश्रमों के पते यों हैं—

१. गया—स्टेशन से एक मील दूर, स्वराज्यपुरी रोड, फोन ५७९। गया रेलवे स्टेशन स्थित द्वितीय श्रेणी के टिकट घर की बगल में, संघ का पूछताछ कार्यालय में पहले मुलाकात कर नाम और व्यवस्था ठीक करा लें। अन्यथा दलालों के चक्कर में फंसना पड़ेगा। उक्त पूछताछ कार्यालय तथा मुख्यालय में अंग्रेजी, बंगला तथा हिन्दी भाषा में "भारत सेवाश्रम संघ"—नाम का साइनबोर्ड जरूर देखें। दस बीघा जमीन पर संघ का विराट आश्रम है। मंदिर, छात्रावास, विद्यालय, दातव्य चिकित्सालय, लाइब्रेरी आदि हैं। आश्रम के विपरीत दिशा में इनकम टैक्स आफिस, रोटरी क्लब, शिशु भारती,

महाबोधी सोसायटी है।

२. काशी—वाराणसी स्टेशन से एक मील दूर विद्यापीठ रोड स्थित सिगरा के समीप, वाराणसी-१० फोन ६६३४२। मंदिर, दातव्य चिकित्सालय, यात्री निवास आदि है। आश्रम के पास बौद्ध मंदिर और स्टेडियम है।

३. प्रयाग—इलाहाबाद जंक्शन स्टेशन से दो मील दूर, ९३ नं. तुलाराम बाग, गांधी रोड, इलाहाबाद—६, फोन—४८६०।

४. वृन्दावन—रेलवे स्टेशन के पास, पोस्ट—वृन्दावन, जिला—मथुरा।

५. दिल्ली—श्री निवासपुरी, नई दिल्ली—६५, फोन—६३-००५६। नई दिल्ली स्टेशन से ६ मील, पुरानी दिल्ली से स्टेशन से १० मील तथा निजामुद्दीन स्टेशन से दो ढाई मील दूर है।

६. कुरुक्षेत्र—स्टेशन के पास ही। पोस्ट—कुरुक्षेत्र, जिला—करनाल (हरियाणा)। फोन—४४५

७. हरिद्वार—स्टेशन से कुछ दूर बस स्टेशन के पास। दिल्ली रोड, देवपुरा, पोस्ट बाक्स २३, फोन—३६३। वृहत् आश्रम, मन्दिर, दातव्य चिकित्सालय, यात्री निवास है। गौरीकुण्ड शाखा के कार्य यहीं से किया जाता है।

८. नवद्वीप—स्टेशन से दो मील दूर। म्युनिसिपल रोड, फोन ११०। यात्री निवास सहित मंदिर, स्कूल, दातव्य चिकित्सालय यहां है।

९. पुरी—स्टेशन से दो मील दूर। स्वर्गद्वार, फोन—२२७। मंदिर, यात्री निवास, दातव्य चिकित्सालय, प्राइमरी स्कूल, बुक बैंक आदि है।

१०. गंगासागर—गंगासागर संगम में कपिलदेव मंदिर के सामने विशाल भूखण्ड पर यह आश्रम है। काकद्वीप से नदी पार करने पर कचुबेड़िया तक बसें चलती हैं। वर्ष में किसी भी समय जाया जा सकता है।

११. हरिद्वार, प्रयाग, उज्जयिनी में कुंभ के अवसर पर सामयिक यात्री निवास, दातव्य चिकित्सालय, पूछताछ कार्यालय, हिन्दू-धर्म संस्कृति प्रचार विभाग स्थापित किया जाता है। हजारों स्वयं सेवकों को लगाकर व्यापक रूप से सेवाकार्य किया जाता है। प्रत्येक वर्ष सागर संगम में भी ऐसी व्यवस्था की जाती है।

१२. कुरुक्षेत्र में सूर्य ग्रहण के अवसर पर, पितृपक्ष के दिनों गया में, रथयात्रा के अवसर पर पुरी में, अन्नकूट के अवसर पर काशी में, हरिहर क्षेत्र के मेला में सोनपुर में, दक्षिण भारत के गोदावरी पुष्करम् और कृष्णापुष्करम् स्नान योग के अवसर पर कुंभ मेला सा भीड़ होती है तब वहां भी संघ की सेवा शिविर लगाये जाते हैं।

नियमावली

संघ द्वारा स्थापित तीर्थाश्रमों तथा मेला शिविरों में आमतौर पर तीन दिन ठहरने का नियम है। अन्य नियम इस प्रकार हैं—

१—प्रतारक और दलालों से सावधान रहें।

२—संक्रामक रोगियों को स्थान नहीं दिया जाता।

३—पहले से ही पत्र द्वारा या मिलकर ठहरने के लिए अनुमति ले लेना चाहिए।

४—मछली, मांस, अण्डे, प्याज-लेहसून और मादक द्रव्यों का उपयोग करने नहीं दिया जाता।

५—अपना बिस्तर तथा आवश्यक सामान साथ लाना चाहिए।

६—संघ के सभी नियमों का पालन करना अनिवार्य है। आश्रमाध्यक्ष के साथ सहयोग करते हुए तीर्थकृत्य करना चाहिए।

७—परदेश में रुपये-पैसे तथा मूल्यवान सामग्री की हिफाजत स्वयं करें। अपरिचितों के साथ घनिष्ठता न बढ़ायें।

८—रिक्शा, टांगा का नम्बर चढ़ते-उतरते समय नोट कर लें। यथास्थान पहुँच कर भाड़ा दें।

९—तीर्थ करते समय व्रत-संयम का पालन करें। श्रद्धा, भक्ति, एकाग्रता और निष्ठा के साथ करें।

१०—तीर्थों में परसेवा, स्नान, दान, देव-दर्शन करना उचित है।